एस.सी.ई.आर.टी., बिहार द्वारा विकसित

दो वर्षीय सेवाकालीन
डिप्लोमा इन एलिमेन्ट्री एजुकेशन
(दूरस्थ शिक्षा)

स्व–अधिगम सामग्री

विद्यालय की समझ व कक्षा का प्रबंधन–2

(चतुर्थ सत्र)

S4.1

राज्य शिक्षा शोध एवं प्रशिक्षण परिषद्
(एस.सी.ई.आर.टी.), महेन्द्रू, पटना (बिहार)

प्रकाशक
दूरस्थ शिक्षा निदेशालय
राज्य शिक्षा शोध एवं प्रशिक्षण परिषद्
(एस.सी.ई.आर.टी.), महेन्द्रू, पटना, (बिहार)

© **दूरस्थ शिक्षा निदेशालय, (एस.सी.ई.आर.टी.),बिहार**

डिप्लोमा इन एलिमेन्ट्री एजुकेशन (दूरस्थ शिक्षा) कार्यक्रम	
सत्र	चतुर्थ
विषयपत्र	विद्यालय की समझ व कक्षा का प्रबंधन–2
ISBN	**978-93-84709-09-9**

प्रथम संस्करण, 2014	
प्रतियाँ	

डी.एल.एड. (ओ.डी.एल.) के साधनसेवियों एवं प्रशिक्षुओं (कार्यरत शिक्षकों/शिक्षिकाओं) के स्वाध्याय हेतु निःशुल्क उपलब्ध

स्व-अनुदेशनात्मक अधिगम सामग्री विकास समूह
विषय-पत्र : विद्यालय की समझ व कक्षा का प्रबंधन-2

दिशाबोध

- श्री हसन वारिस, निदेशक, राज्य शिक्षा शोध एवं प्रशिक्षण परिषद्, पटना
- श्री ए. के. पाण्डेया, निदेशक, शोध एवं प्रशिक्षण निदेशालय, शिक्षा विभाग, बिहार
- डॉ. सैयद अब्दुल मोईन, विभागाध्यक्ष, अध्यापक शिक्षा विभाग, एस.सी.ई.आर.टी, पटना
- डॉ. प्रमिला मनोहारन, शिक्षा विशेषज्ञ, यूनिसेफ, पटना
- डॉ. ज्ञानदेव मणि त्रिपाठी, प्राचार्य, मैत्रेय कॉलेज ऑफ एजूकेशन एण्ड मैनेजमेन्ट, हाजीपुर(वैशाली)

परामर्श

- श्री अरविन्द सरदाना, निदेशक, एकलव्य, देवास, मध्य प्रदेश
- श्री राम मूर्त्ति शर्मा, राजकीय उच्च विद्यालय, करकौर, पंजाब

संपादन

- श्री चन्दन श्रीवास्तव, केन्द्रीय शिक्षा संस्थान., शिक्षा विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

लेखन

- श्री जीतेन्द्र कुमार, अध्यापक, मध्य विद्यालय, धनसीर, गया
- श्री चन्दन श्रीवास्तव, सी.आई.ई., शिक्षाशास्त्र विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली
- श्री मती मंजु रानी सिंह, राजकीय उर्दू मध्य विद्यालय, नरकटघाट, गुलज़ारबाग, पटना
- सुश्री सोनम कुमारी, राजकीय बुनियादी अभ्यास शाला, महेन्द्रू, पटना

संयोजन

- डॉ० रीता राय, व्याख्याता, अध्यापक शिक्षा विभाग, एस.सी.ई.आर.टी, पटना

प्रस्तावना

विद्यालय में शिक्षक के ऊपर शिक्षण के साथ–साथ अच्छे प्रबन्धन एवं कुशल नेतृत्व प्रदान करने की जिम्मेवारी भी होती है। इसके लिये शिक्षक को बदलते समय एवं परिवेश के अनुसार स्वयं के कार्यनीतियों में भी बदलाव लाना पड़ता है ताकि वह विद्यालय प्रबंधन के नवाचारी परिवर्तनों को अपने विद्यालय में प्रयोग कर सके। अतः विद्यालय के परिवर्तनशील घटकों के प्रभावी प्रबंधन के लिये शिक्षक को प्रबन्धन के विभिन्न आयामों के नियोजन एवं उनके कार्यप्रणाली के विषय में जानना जरूरी है। साथ ही, उसे विभिन्न संसाधनों के उत्तम प्रयोग की समझ होनी जरूरी है। विद्यालय की कार्य प्रणाली समुदाय से प्रभावित होती है इसलिए प्रशिक्षुओं को विद्यालय के संचालन में समुदाय की सहभागिता की भी स्पष्ट समझ होनी चाहिए। वर्तमान समय की अपेक्षाओं एवं परिस्थितियों के आलोक में विद्यालय के विभिन्न आयामों में परिवर्तन पर भी जोर दिया जा रहा है। बच्चों के समाजीकरण एवं सीखने की प्रक्रिया में सूचना एवं संचार तकनीकी का प्रभाव नजरअंदाज नहीं किया जा सकता। विद्यालय प्रबन्धन में प्रभावी बदलाव के लिये शिक्षक को सूचना एवं संचार तकनीकी के बेहतर उपयोग की समझ होनी चाहिए तथा उसे इसके लिए स्वयं को तैयार करना चाहिए। सरकारी व संस्थागत स्तर पर भी शिक्षकों के उन्मुखीकरण हेतु विभिन्न प्रशिक्षण कार्यक्रमों का आयोजन उन्हें नई चीजे सीखने एवं कक्षाकक्ष में उनके प्रयोग के लिए प्रोत्साहित करता है जो न केवल उनमें आत्मविश्वास भरता हैं बल्कि उनके वृतिक विकास में भी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। विद्यालय प्रबन्धन हेतु शिक्षक को विभिन्न शैक्षिक संस्थाओं एवं सरकारी योजनाओं की जानकारी एवं समझ भी जरूरी है। शिक्षक के कार्यो का विभिन्न शैक्षिक संस्थाओं के साथ समन्वय भी एक महत्त्वपूर्ण पहलू है। अतः विद्यालय के भिन्न–भिन्न कार्यों के अन्तर्गत विभिन्न शैक्षिक संस्थाओं एवं सरकारी योजनाओं की भूमिका किस प्रकार से है, इसकी जानकारी एवं समझ शिक्षकों में होनी चाहिए। विद्यालय प्रबन्धन के अध्ययन से सीखने–सिखाने के वातावरण को तनाव तथा भयमुक्त व आनन्दमयी बनाया जा सकता है। अतः प्रस्तुत पाठ्यक्रम को इस दृष्टि से विकसित किया गया है कि यह शिक्षक को विद्यालय में अच्छा वातावरण व उचित कक्षा प्रबन्धन हेतु तैयार करे।

विषयसूची

इकाई	इकाई का नाम	पृष्ठ संख्या
1	विद्यालय प्रबंधन के आयाम	01–27
2	विद्यालय में परिवर्त्तन	28–43
3	शिक्षक वृत्तिक विकास के आयाम	44–62
4	शैक्षिक संस्थाएं, प्रशिक्षण केन्द्र व सरकारी योजनाओं की समीक्षात्मक समझ	63–84

इकाई–1
विद्यालय प्रबंधन के आयाम

1.1 परिचय
1.2 सीखने के उदेश्य
1.3 पूर्व अनुभव
1.4 विद्यालय प्रबंधन की अवधारणात्मक समझ
    1.4.1 विद्यालय प्रबंधन की आवश्यकता
    1.4.2 विद्यालय प्रबंधन की अवधारणा
1.5 विद्यालय प्रबंधन की संरचनात्मक समझ
    1.5.1 विद्यालय प्रबंधन में विद्यार्थियों की भूमिका
        1.5.1.1 *बाल संसद की भूमिका*
        1.5.1.2 *मीना मंच की भूमिका*
    1.5.2 विद्यालय प्रबंधन में प्रधान–शिक्षक एवं अन्य शिक्षकों की भूमिका
    1.5.3 विद्यालय प्रबंधन में समुदाय की भूमिका
    1.5.4 विद्यालय प्रबंधन में प्रशासनिक संस्थाओं की भूमिका
1.6 विद्यालय में समय प्रबंधन
    1.6.1 विद्यालय में चेतना सत्र से दैनिक प्रबंधन की शुरूआत
    1.6.2 समय सारणी
    1.6.3 शैक्षिक कार्यक्रमों के आयोजन का कैलेण्डर
    1.6.4 वार्षिक कैलेण्डर
1.7 विद्यालय में आपदा प्रबंधन एवं सुरक्षा शिक्षा की अवधारणा
1.8 समेकन
1.9 मूल्यांकन के लिए प्रश्न

1.1 परिचय

हमें अपने आस–पास के विद्यालयों में कार्यों का जो स्वरूप दिखता है उसके पीछे विद्यालय प्रबंधन की जटिल संरचना है। द्वितीय सत्र में, इसी विषयपत्र के पहले भाग की पहली इकाई में आपने विद्यालय संगठन के घटकों का अध्ययन किया था। इस इकाई में आप उन घटकों को विद्यालय प्रबंधन में भूमिका के दृष्टिकोण से समझेंगे। यदि देखें तो शिक्षकों की विद्यालय प्रबंधन में सबसे महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है क्योंकि वे प्रबंधन के सभी कारकों के मध्य तालमेल बिठानेवाले मुख्य अभिकर्ता होते हैं। अतः उनमें विद्यालय प्रबंधन से सम्बंधित अवधारणाओं की समझ विशेष तौर पर होनी चाहिए और उन्हें विद्यालय प्रबंधन में अपनी भूमिका के प्रति संवेदनशील भी होना जरूरी है। विद्यालय प्रबंधन में कई अन्य कारकों जैसे–समुदाय, प्रशासनिक

संस्थाएं, शिक्षा समिति, आदि की भी भागीदारी होती है, जिनके साथ समन्वय बनाकर शिक्षकों को कार्य करना होता है। इसके साथ ही, विद्यालय के अन्दर प्रतिदिन चलनेवाले विभिन्न कार्यों के प्रबंधन का भी ध्यान शिक्षकों को रखना होता है। अतः उन्हें विद्यालय के बेहतर प्रबंधन के लिए समय–सारणी, वार्षिक कार्य योजना, आदि के निर्माण की आवश्यकता पड़ती है। आजकल, विद्यालय प्रबंधन के अंतर्गत विभिन्न आपदाओं, उनके प्रभावों व उनसे सुरक्षा के प्रति जागरूक रहने के बात पर भी बल दिया जा रहा है। अतः शिक्षकों को इस संदर्भ में भी अपनी तैयारी करने की अपेक्षा है ताकि वे अपने विद्यालय में आपदा प्रबंधन के कार्य को प्रभावी ढंग से कर सके। इस इकाई में उपरोक्त बिन्दुओं पर चर्चा की जा रही है।

1.2 सीखने के उद्देश्य

- विद्यालय की प्रबंधन व्यवस्था के विभिन्न आयामों की समझ विकसित करना।
- विद्यालय के प्रबंधात्मक संरचना को समझकर उसका आलोचनात्मक विश्लेषण करना।
- विद्यालय के नियमित गतिविधियों का प्रबंधात्मक दृष्टिकोण से विवेचना करना।
- विद्यालय प्रबंधन में एक शिक्षक के रूप में अपनी भूमिका की समझ बनाना।
- विद्यालय में समय प्रबंधन के विविध तरीकों से अवगत होना।
- विद्यालय के संदर्भ में आपदा प्रबंधन के महत्व को समझना।

1.2 पूर्व अनुभव

अभी, आप अपने विद्यालय में प्रबंधन के विभिन्न कार्यों को कर रहे होंगे। विद्यालय खुलते ही बच्चों को व्यवस्थित करके प्रातःकालीन सभा को कराना, कक्षाओं को शिक्षण के लिए व्यवस्थित करना, विद्यालय के अन्य कामकाज को करने के लिए अपनी दिनचर्या को व्यवस्थित करना, आदि कार्यों में आप अपने प्रबंधात्मक कौशल का उपयोग प्रतिदिन करते हैं।

1.4 विद्यालय प्रबंधन की अवधारणात्मक समझ

मुन्नी आज पहली बार अपने पड़ोंस के विद्यालय में गई, जहाँ का नजारा देखकर वह बहुत ही दंग रह गई। सुबह जब वह विद्यालय पहुंची तो बच्चों की बहुत सारी कतारें बनी हुई थी और सब को प्रधानाचार्य कुछ कह रहे थे। एक साथ इतने बच्चों को कतारबद्ध स्वरूप में उसने कभी नहीं देखा था। उसके मन में यह बात बार–बार आ रही थी कि बच्चे ऐसे क्यों बैठे हैं। थोड़ी देर बाद, सभी बच्चे उठे और कतार में ही अपनी अपनी कक्षाओं की ओर जाने लगे। मुन्नी को यह भी बड़ा अजीब लग रहा था कि अब कहीं और जाने की क्या जरूरत है, सब यहीं बैठे रहते। वह कहाँ जाए यह सोंच ही रही थी कि एक शिक्षक ने उसका हाथ पकड़कर पहली कक्षा में बिठा दिया। अचानक से घंटी बजी और एक मैडम कक्षा में आ गयीं। उन्होंने सबको अपने–अपने बस्ते से एक खास किताब को निकलने के लिए कहा। मुन्नी को यह अटपटा लग रहा था कि वह वही किताब क्यों निकाले, कोई और क्यों नहीं। उसने अपनी पसन्द की दूसरी किताब निकाला तो मैडम ने उसे बैग में अंदर रखवा दिया और उसी किताब को निकालने के लिए कहा जो बाकि बच्चों ने निकाल रखा था। फिर मैडम ने कुछ लिखने के लिए दिया। तभी घंटी बजी और मैडम ने उस किताब को बंद करवा दिया। फिर कोई और किताब निकालने को कहा। मुन्नी ने इस बार उसी किताब को

निकाला जो मैडम ने कहा था। थोड़ी देर में एक और घंटी बजी और मुन्नी ने देखा कि सभी बच्चे अपनी–अपनी कक्षाओं से भागकर मैदान में आ गये और खेलने लगे। वह सोंचने लगी कि इससे पहले की घंटी बजनेपर ऐसा बच्चों ने क्यों नहीं किया। उसी दौरान, सब बच्चों ने विद्यालय मे बन रहे खाने को भी खाया। फिर एक घंटी बजी और सभी पुनः अपनी कक्षाओं की ओर जाने लगे। फिर, वैसे ही सारा काम होने लगा जैसे कि सुबह–सुबह कक्षाओं में आने पर हुआ था। कुछ घंटों बाद जब आखिरी घंटी बजी जो सभी बच्चे विद्यालय से बाहर जाने लगे है। मुन्नी को यह सोंचकर ताजुब्ब हो रहा था कि आज दिन भर विद्यालय में जिसप्रकार से घटनाक्रम रहा, उसके पीछे क्या कारण है।

उपरोक्त उद्धरण में मुन्नी की जो जिज्ञासाएं हैं उसे समझाने के लिए आप क्या कहेंगे। यह स्वाभाविक है कि आप उसमें विद्यालय प्रबंधन के कुछ आयामों की बात करेंगे। अपने विद्यालयी जीवन में आपकी भी इसी प्रकार से विद्यालय के काम को लेकर कई जिज्ञासाएं होंगी और आज एक शिक्षक के रूप में कार्य करते हुए भी आप विद्यालय प्रबंधन के कई नए आयामों से अवगत हो रहे होंगे। अतः, विद्यालय प्रबंधन को समझने के आपके अपने दृष्टिकोण में भी परिवर्तन आता रहा है। इस सब के संदर्भ में यहां, विद्यालय प्रबंधन की अवधारणा एवं इसके महत्व को वृहत रूप में समझने की कोशिश की गई है। यहां, विद्यालय प्रबंधन से तात्पर्य है–विद्यालय के संसाधनों का सर्वोतम उपयोग करते हुए इसके सभी कार्यों को व्यवस्थित तरीके से करना। इस संदर्भ में जो सबसे पहला प्रश्न उठता है कि क्या विद्यालय प्रबंधन के बिना विद्यालय का कामकाज नहीं चल सकता। इसकी चर्चा अलगे खण्ड में की जा रही है। उन्हे समझते हुए आप स्वयं भी सोंचे कि विद्यालय प्रबंधन का आपके विद्यालय के संदर्भ में क्या महत्व है।

1.4.1 विद्यालय प्रबंधन की आवश्यकता

विद्यालय में दैनिक गतिविधियों का संचालन सुचारु रुप से करने के लिए हर रोज बहुत सारे लोगों को प्रयास करना होता है। प्रतिदिन की शुरुआत चेतना सत्र से करना, कक्षाओं में शिक्षण–अधिगम के कार्य में सबों की भूमिका को सुनिश्चित करना, सीखने के साथ–साथ खेलकूद तथा अन्य कार्यकलापों को विद्यालयी गतिविधियों में सम्मिलित करना, साप्ताहिक योजना बनाना, यदि किसी सप्ताह में कोई विशेष आयोजन होनेवाला है तो उसका विवरण पहले से ही तैयार करना, उसी प्रकार महीने तथा वार्षिक गतिविधियों का निर्धारण करना, आदि ऐसे कार्य हैं जिनके लिए विद्यालय के सभी कर्मियों को निरन्तर योजना बनाते रहना होता है। इतने सारे कार्यों को बिना किसी व्यवस्थित योजना के नहीं किया जा सकता। अतः विद्यालय प्रबंधन का होना एक आवश्यक है।

इसके साथ ही, विद्यालय प्रबंधन की आवश्यकता इसलिए है ताकि विद्यालय के हर आयाम पर ध्यान दिया जा सके तथा उसका सर्वोतम प्रयाग हो सके। अक्सर यह देखा जाता है कि विद्यालय में कुछ तत्वों जैसे भवन, कक्षा, आदि के रख–रखाव को महत्व दिया जाता है और कई अन्य महत्वपूर्ण घटकों की अनदेखी कर दी जाती है। उदाहरण के तौर पर देखें तो विद्यालय का जो मुख्य कर्ता यानी शिक्षक हैं, उनके कौशल और ज्ञान को विकसित करने पर विशेष ध्यान नहीं दिया जाता है। ऐसा इसलिए क्योंकि विद्यालय में प्रबंधन के व्यापक सोंच की कमी है जिसके कारण विद्यालय के प्रधानाचार्य इस आयाम को अपने प्रबंधन का भाग नहीं समझते हैं। अतः विद्यालय प्रबंधन के व्यवस्थित संरचना में इसके सभी आयामों के प्रबंधन को सही तरीके से किये जाने पर जोर होना चाहिए।

विद्यालय प्रबंधन की आवश्यकता इसलिए भी है क्योंकि विद्यालय का ज्ञान एवं कार्य सदैव परिवर्तनशील है। इसके प्रति विद्यालय को सजग रहना चाहिए। इसलिए, विद्यालय में नवाचारों को प्रोत्साहित करने के दृष्टिकोण से विद्यालय प्रबंधन की आवश्यकता है। नवाचारी कार्यों या नवाचार के प्रयासों द्वारा ही शिक्षा में नए शोधों, नए विचारों व नए परिप्रेक्ष्यों का विकास हो सकता है। नवाचारों से ही समस्याओं को हल करने के नए रास्ते विकसित हो सकते हैं। विद्यालय का प्रबंधन स्वयं कई नवाचारों से प्रभावित होता रहता है। नए–नए सिद्धांतों और तकनीकों के आने से विद्यालय की प्रबंधारत्मक स्वरूप में भी परिवर्तन लाया जा सकता है। अतः विद्यालय में नवाचारी परिवर्तन लाने मे विद्यालय प्रबंधन की अग्रणी भूमिका हो सकती है।

विद्यालय संचालन हेतु अलग–अलग संसाधनो का बेहतर ढंग से उपयोग किए जाने की अपेक्षा होती है। विद्यालय–भवन, खेल का मैदान, प्रयोगशाला तथा पुस्तकालय आदि का व्यवस्थित ढंग से इस्तेमाल होने से ही विद्यालय में शैक्षिक विकास को गति मिलती है। इसके लिए भी विद्यालय में सक्रिय प्रबंधन की आवश्यकता है। विद्यालय के सभी कर्मचारियों के बीच तालमेल बैठाना विद्यालय की मुख्य आवश्यकता है। क्योंकि, विद्यालय के सभी कर्मचारियों के बीच जबतक पारस्परिक सहयोग नहीं होगा तबतक विद्यालय का समुचित संचालन नहीं हो सकेगा। अतः विद्यालय प्रबंधन के उन सिद्धांतों को समझना जरूरी है जिससे विद्यालय के सभी कर्मियों के मध्य तालमेल को सुदृढ़ किया जा सके। प्रबंधन से यह भी जानना आसान होता है कि कहाँ से कार्य प्रारंभ किया जाए, कौन से संसाधन जुटाये जाएँ, उनका सर्वोतम उपयोग कैसे हो तथा कार्यों को सफलता कैसे मिले? उदाहरण के तौर पर, यदि विद्यालय में बच्चों की संख्या बढ़ रही है तो इसके प्रबंधन के लिए ऐसे उपायों को अपनाना ताकि बच्चों के बैठने से लेकर उनके शिक्षा की उपयुक्त व्यवस्था हो सके। इसके लिए, विद्यालय प्रबंधन के समझ की आवश्यकता होगी।

साथ ही, विद्यालय और समुदाय के मध्य सम्बंधों को प्रगाढ़ बनाने में भी विद्यालय प्रबंधन की विशेष भूमिका हो सकती है। विद्यालय–समुदाय सम्बंध के विषय में आप द्वितीय सत्र में अध्ययन कर चुके हैं जिसके अंतर्गत यह चर्चा की गई थी कि विद्यालय और समुदाय के सम्मिलित प्रयास से ही उत्तम शैक्षिक विकास हो सकता है। लेकिन, परिस्थितियां इसके विपरीत जान पड़ती है, जहां विद्यालय और समुदाय एक दूसरे को विरोधी दृष्टिकोण से देखते हैं। विशेष तौर पर, शिक्षक अपने विद्यालय के कार्य में समुदाय की भागीदारी को एक नाकारात्मक हस्तक्षेप के रूप में समझते हैं। इसके कारण, विद्यालय को समुदाय के प्रबंधात्मक सहयोग का लाभ नहीं मिल पाता है। अतः विद्यालय एवं समुदाय के बीच तालमेल और समन्वय विकसित करने के दृष्टिकोण से भी विद्यालय प्रबंधन की आवश्यकता है। इसके लिए, विद्यालय के शिक्षकों और कर्मचारियों को समुदाय की अपेक्षाओं को समझना चाहिए तथा उनके अनुसार बच्चों को पढ़ाना चाहिए। समुदाय को कभी भी विद्यालय के विकास के मार्ग में बाधक नहीं समझना चाहिए तथा लगातार उन्हें विद्यालय के विकास से जुड़ी विभिन्न कार्यों के बारे में जानकारी देनी चाहिए। जब समुदाय की विद्यालय प्रबंधन में भूमिका बढ़ेगी तो उनमें विद्यालय के प्रति अपनत्व की भावना भी बढ़ेगी जो विद्यालय के विकास के लिए अति आवश्यक है। इसके साथ ही, विद्यालय प्रबंधन स्वयं में कई सामाजिक संकल्पनाओं के परोक्ष शिक्षण का माध्यम भी है। इसके सहभागी स्वरूप के माध्यम से विद्यालय के शिक्षकों व बच्चों में लोकतांत्रिक मूल्यों जैसे–समता, स्वतंत्रता, श्रम की गरिमा का सम्मान, अपने अधिकारों के प्रति जागरुकता, पारस्परिक सहयोग तथा दूसरों की बातों को सुनने की सहनशीलता आदि मूल्यों का विकास स्वयं ही होता जाता है। इससे समाज में लोकतांत्रिक सोंच को बढ़ावा दिया जा सकता है।

गतिविधि

विद्यालय का उचित प्रबंधन क्यों आवश्यक है, इस विषय पर अध्ययन केन्द्र पर एक परिचर्चा आयोजित करें। इसके लिए सभी प्रशिक्षु अपने–अपने विद्यालय के संदर्भ में प्रबंधन से सम्बंधित विशेषताओं को साझा करें।

1.4.2 विद्यालय प्रबंधन की अवधारणा

यदि देखें तो प्रबंधन एक सामान्य अवधारणा है जिसकी आवश्यकता लगभग हर व्यक्ति हो हर कार्य में पड़ती है। अपने घरेलु कामकाज से लेकर बड़ी–बड़ी संस्थाओं के कार्यों में प्रबंधन अंतर्निहित होता है। फिर, इसकी विशेष समझ विद्यालय के संदर्भ में करने की आवश्यकता क्यों है? ऐसा इसलिए क्योंकि अलग–अलग संदर्भों में इसका स्वरूप अलग–अलग होता है। संस्था, व्यक्ति, कार्य, संसाधन और उद्देश्यों के अनुरूप ही इसका स्वरूप निर्धारित होता है। अतः यह कहा जा सकता है कि सामान्य अवधारणा होते हुए भी प्रबंधन को केवल अपने संदर्भ में भी विशिष्ट रूप से विकसित किया जा सकता है।

प्रबंधन शब्द से ऐसा मतलब भी निकाला जाता है कि यह एक यांत्रिक प्रक्रिया है जिसके अंतर्गत किसी यंत्र का हरेक पुर्जा एक दूसरे से जुड़ा हुआ होता है और एक दूसरे के कार्य को नियंत्रित एवं आगे बढ़ाता है। इस अर्थ के कारण, प्रबंधन शब्द को किसी फैक्ट्री या उत्पादन इकाई के संदर्भ में ही परिभाषित किया जाता रहा है। लेकिन, प्रबंधन की यह परिभाषा विद्यालय प्रबंधन को समझने के लिए नाकाफी है क्योंकि विद्यालय का संदर्भ स्वयं में किसी फैक्ट्री के संदर्भ से बहुत अलग है। अतः विद्यालय प्रबंधन की आवश्यकता विद्यालय के दैनिक कार्यों को यांत्रिक तौर पर एक ही तरीके से करते रहने से नहीं है बल्कि इसकी आवश्यकता तो विद्यालय के वृहतर उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए है। विद्यालय में हर रोज क्या नयापन लाया जा सकता है, किसी कार्य को अलग–अलग ढंग से करने से विद्यालय के माहौल में क्या बदलाव आ सकता है, आदि के लिए विद्यालय प्रबंधन की जरूरत पड़ती है।

इस तरह, विद्यालय प्रबंधन से तात्पर्य ऐसी व्यवस्था से है जिसके माध्यम से विद्यालय के तमाम गतिविधियों को व्यवस्थित तरीके से किया जाता है। इसमें विद्यालयी संसाधनों के प्रबंधन से लेकर मानव संबंधों का प्रबंधन भी शामिल है। यह एक ऐसी प्रक्रिया है जो कई स्तरों पर चलती है तथा इसके लिए कई लोगों की भागीदारी भी सुनिश्चित करनी होती है। विद्यालय के बाहर का प्रबंधन, विद्यालय स्तर पर प्रबंधन, कक्षा स्तर पर प्रबंधन, ये सभी आपस में मिलकर ही प्रबंधन की प्रक्रिया को पूर्णता प्रदान करते हैं। इसके प्रत्येक स्तर पर अनेक लोगों की भागीदारी होती है जिनमें विशेष योग्यता तथा दक्षता की अपेक्षा भी की जाती है।

यदि देखें तो किसी भी कार्य के प्रबंधन का कोई–न–कोई उद्देश्य अवश्य होता है। क्योंकि उद्देश्य के अनुरूप ही उस कार्य को करने की रूपरेखा को बनाया जाता है। उदाहरण के तौर पर यदि विद्यालय में वृक्षारोपण कार्यक्रम का आयोजन हो रहा है तो इसके पीछे के उद्देश्यों को गहराई से समझे बिना प्रबंधात्मक दृष्टिकोण से कार्यक्रम को प्रभावी नहीं बनाया जा सकता। अतः यहां, उद्देश्य से तात्पर्य मात्र औपचारिक उद्देश्यों से नहीं है बल्कि वैसे उद्देश्यों से है जो किसी कार्य के व्यापक आयामों को प्रदर्शित करते हैं। यदि विद्यालय के संदर्भ में प्रबंधन के उद्देश्यों की बात करें तो उसका एक व्यापक स्वरूप निकलकर आता है जिसके अंतर्गत कई कार्य सम्मिलित हैं। उन कार्यों को आगे दिए गए चित्र के माध्यम से समझा जा सकता है :

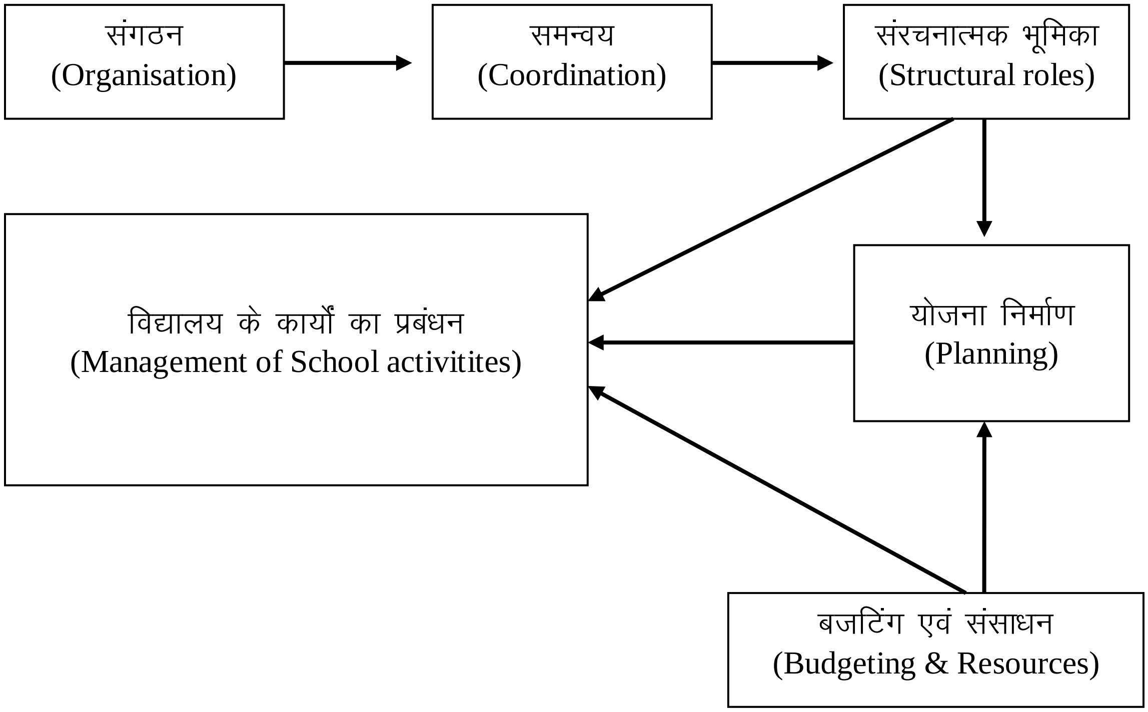

जैसा कि आप पहले समझ चुके हैं कि प्रत्येक विद्यालय का एक संगठन होता है और उसके अंदर कई घटक होते हैं। यदि प्रबंधन की बात करें तो उन घटकों के मध्य समन्वय से ही विद्यालय के संरचनात्मक भूमिकाओं का निर्धारण होता है। संरचनात्मक भूमिकाओं के आधार पर ही विद्यालय में योजनाओं का निर्माण होता है और उपलब्ध संसाधानों की मदद से कार्यों का प्रबंधन किया जाता है। इस तरह, विद्यालय में प्रबंधन की एक प्रक्रिया काम करती है।

विद्यालय का समुचित संचालन विद्यालय प्रबंधन का एक महत्त्वपूर्ण भाग है। वास्तव में विद्यालय संचालन से ही विद्यालय के प्रबंधन की शक्तियों एवं कमजोरियों का पता चलता है। विद्यालय संचालन में विद्यालय प्रबंधन से जुड़े सभी घटकों– विद्यार्थियों, शिक्षकों, प्रधान–शिक्षक, स्कूल प्रबंधन समिति तथा स्थानीय संस्थाओं (ग्राम पंचायत, नगर पंचायत, राज्य स्तरीय या केन्द्र स्तरीय संस्थाएं) आदि की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। समुचित संचालन का अर्थ है कि विद्यालय संबंधित सारे कार्यों की योजना सही तरीके से बने, विद्यालय की योजना को सही ढंग से कार्यान्वित किया जाए तथा इन योजनाओं के क्रियान्वयन की समीक्षा उचित ढंग से की जाए, जिससे कि योजना बनाने व उसे कार्यान्वित करने में आनेवाली कठिनाईयों को पहचान कर उसे दूर किया जा सके।

विद्यालय का संचालन बेहतर तरीके से हो इसके लिए यह जरुरी है कि उपलब्ध संसाधनों का अधिकतम लाभ उठाया जाए। उचित नियोजन के अभाव में विद्यालय में प्रत्येक वस्तु अस्त–व्यस्त रहती है जिसके कारण शक्ति, समय और उपलब्ध सभी सामग्री का अपव्यय होता है। विद्यालय के संचालन के लिए लोगों व संचालन से जुड़े घटकों के बीच उचित समन्वय का होना बहुत महत्त्वपूर्ण है। 'समन्वय' का अर्थ है प्रबंधन और उपलब्ध साधनों के बीच पारस्परिक संबंध। समन्वय का यह भी अर्थ है कि विभिन्न घटकों के बीच पारस्परिक संबंध समुचित ढंग से स्थापित हो तथा सभी लोग एक दूसरे के कार्य में सहायक बन सके। ऐसा

नहीं होना चाहिए कि एक व्यक्ति का कार्य दूसरे व्यक्ति के लिए बाधा बने। उदाहरणस्वरुप :—यदि विद्यालय के दो शिक्षक एक ही समय में दो अलग—अलग प्रतिवेदन लेकर जिला शिक्षा कार्यालय में जमा करने जाते हैं तो यह समय, शक्ति, परिश्रम एवं धन सभी का अपव्यय होगा क्योंकि यह कार्य एक ही शिक्षक द्वारा आसानी से किया जा सकता है।

विद्यालय के संचालन में विद्यालय के समस्त ताने बाने जैसे— विद्यालय भवन, पाठ्यपुस्तकें, समय—सारणी, पाठ्यसहगामी क्रियाएँ तथा स्टाफ आदि के मध्य समन्वयात्मक प्रबंधन का ध्यान रखना आवश्यक होता है। विद्यालय के स्तर पर दैनिक कामकाज के संबंध में यह जिम्मेवारी विशेष रूप से प्रधान—शिक्षक की होती है कि वे यह सुनिश्चित करें कि विद्यालय में कार्यरत सभी शिक्षक व अन्य कर्मचारी अपने—अपने कार्य को सुचारु ढंग से करे तथा विद्यार्थी शिक्षा प्राप्ति एवं पाठ्य सहगामी क्रियाओं में सही ढंग से भाग लें। इसी तरह विद्यालय परिसर के भौतिक संसाधनों की देखभाल व रखरखाव का ध्यान रखना भी प्रधान—शिक्षक की जिम्मेवारी होती है। यहां, जिम्मेवारियों का तात्पर्य यह नहीं है कि उन्हें प्रधान—शिक्षक द्वारा अकेले निभाना है बल्कि उनका व्यापक अर्थ यह है कि प्रधान—शिक्षक अपने सहकर्मी शिक्षकों के साथ समन्वय बनाते हुए उन जिम्मेवारियों को निभाए।

यदि व्यावहारिक तौर पर देखें तो 'विद्यालय प्रबंधन' से दो मायने निकलते हैं। पहले मायने के अनुसार, विद्यालय प्रबंधन विभिन्न सदस्यों, उद्देश्यों व अधिकारों से युक्त एक इकाई है जो विद्यालय के कार्यों का संचालन करती है। इसमें विद्यालय के अंदर के व्यक्तियों के साथ—साथ बाह्य सदस्यों अर्थात समुदाय एवं विभिन्न संस्थाओं के लोग भी शामिल होते हैं। इसके अंतर्गत, विद्यालय प्रबंधन के प्रत्येक सदस्य के कुछ निर्धारित कार्य भी हैं, विशेष तौर पर वैसे सदस्यों का जो औपचारिक तौर पर विद्यालय से जुड़े होते हैं जैसे—शिक्षक, प्रधान शिक्षक, विद्यालय शिक्षा समिति आदि। यहां, इस बात पर विशेष जोर दिया जाता है कि विद्यालय प्रबंधन एक इकाई के रूप में है जिसमें कई घटक है। वे घटक अकेले कोई प्रबंधन नहीं कर सकते क्योंकि उनका कोई स्वतंत्र अस्तित्व नहीं होता है। अर्थात, शिक्षक या कोई अन्य सदस्य अकेले विद्यालय का प्रबंधन नहीं कर सकते। इसके लिए उन्हें सबको साथ लेकर एक इकाई के रूप में कार्य करना होगा।

दूसरे मायने के अनुसार, विद्यालय प्रबंधन को एक प्रक्रिया के तौर पर समझा जाता है जिसके अंतर्गत विशेष जोर इस बात पर होती है कि विभिन्न कारकों के कारण विद्यालय की गतिविधियों को किस प्रकार से क्रियांवित किया जा रहा है। इस संदर्भ में यदि देखें तो विद्यालय प्रबंधन को लेकर दो स्तरों की गतिविधियों को परिभाषित किया जा सकता है। पहली प्रबंधात्मक गतिविधि वह है जिसका स्वरूप लगभग सभी विद्यालयों में एक जैसा ही होगा। यह विद्यालय प्रबंधन के सार्वभौमिक प्रकृति को दर्शाता है। उदाहरण के तौर पर, प्रत्येक विद्यालय में प्रबंधन के लिए प्रधानाचार्य, शिक्षक, मानक नियमों आदि का होना। इसके साथ—साथ, प्रबंधात्मक गतिविधियों का दूसरा स्तर ऐसा है जो प्रत्येक विद्यालय में विशिष्ट होता है क्योंकि यह विद्यालय के संदर्भ से प्रभावित होता है जैसे वहां वह समुदाय और शिक्षकों के मध्य कैसा सम्बंध है, प्रधानाचार्य की क्या विचारधारा है, शिक्षकों का विद्यालय प्रबंधन को लेकर क्या नजरिया है, आदि। इस तरह, जहां पहले स्तर पर विद्यालय प्रबंधन के स्थूल घटकों (मैक्रो लेबल) को सम्बोधित किया जाता है वहीं दूसरे स्तर पर उसके सूक्ष्म प्रक्रियाओं (माइक्रो लेबल) की भूमिका को परिभाषित किया जाता है। इन दोनों ही स्तरों को एक साथ समझने से विद्यालय प्रबंधन के व्यापक स्वरूप को समझने में मदद मिलती है।

गतिविधि

- आपके विद्यालय में प्रबंधन की क्या अवधारणा है? इस संदर्भ में अपने सहकर्मियों की धारणाओं का भी विश्लेषण करें।
- अपने विद्यालय के किसी एक कार्य को लेते हुए उसके प्रबंधात्मक प्रक्रिया का विश्लेषण करें।
- अपने विद्यालय के अलावा किसी अन्य विद्यालय में जाकर वहां के प्रबंधात्मक प्रक्रिया का अध्ययन करें।

1.5 विद्यालय प्रबंधन के संरचनात्मक समझ

विद्यालय प्रबंधन की संरचना के मुख्य रुप से पाँच तत्व हैं— भवन, विद्यार्थी, शिक्षक, समुदाय एवं स्थानीय प्रशासनिक संस्थाएँ। इन सभी तत्वों का एक विद्यालय की संरचना में बहुमूल्य योगदान है। किसी भी एक तत्व के अभाव में विद्यालय की संरचना पूरी नहीं हो सकती है। जैसे—विद्यालय प्रबंधन की संरचना में विद्यालय भवन की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। विद्यालय भवन के अंतर्गत स्थिति, इमारत, खेल के मैदान, पुस्तकालय, छात्रावास, फर्नीचर तथा अन्य साज—सज्जा आते हैं। जब तक विद्यालय के भवन को उचित ढंग से निर्मित नहीं किया जाएगा, तब इससे पूरा लाभ नहीं उठाया जा सकता है, क्योंकि प्रबंधन के सभी कार्यों को विद्यालय भवन के अंतर्गत ही अलग—अलग स्थानों पर संचालित किया जाता है। उदाहरण के तौर पर, विद्यालय रिकार्ड जिसके विषय में आपने द्वितीय सत्र की चौथी इकाई में पढ़ा था, की स्थिति भी प्रबंधन को प्रभावित करते हैं। इसी के साथ, विद्यालय के लिए उचित परिवेश, शुद्ध जल, वायु एवं प्रकाश आदि का होना बहुत जरुरी है और वहाँ आवागमन की पर्याप्त व्यवस्था होनी चाहिए। साथ ही, विद्यालय भवन के कक्षों के निर्माण पर भी ध्यान देना चाहिए। सामान्य कक्षा—कक्ष, विशेष कक्ष, प्रयोगशाला, पुस्तकालय, शौचालय, विद्यालय प्रांगण, इत्यादि के नियमित प्रबंधन की भी आवश्यकता होती है। प्रबंधन के अन्य तत्वों का विश्लेषण आगे के खण्डों में किया जा रहा है।

1.5.1 विद्यालय प्रबंधन में विद्यार्थियों की भूमिका

विद्यालयी संरचना के सामान्य समझ के अनुसार विद्यार्थी पढ़नेवाले तथा शिक्षक पढ़ानेवाले घटक हैं। लेकिन, विद्यालयी प्रबंधन के दृष्टिकोण से विद्यार्थियों एवं शिक्षकों की भूमिका को अलग तरीके से समझने की जरूरत है। विद्यार्थी विद्यालय के आवश्यक अंग होते हैं, इसलिए विद्यालय प्रबंधन में उनकी भूमिका अपरिहार्य होती है। लेकिन, इस भूमिका को विद्यालय में अभी भी विशेष महत्व नहीं प्राप्त है। हालांकि, उन्हें ही केन्द्र में रखकर विद्यालय के समस्त शैक्षिक प्रयासों का संगठन किया जाता है जैसे—पाठ्यक्रम का निर्धारण, विद्यालय भवन की स्थापना, योग्य शिक्षकों तथा प्रधानाध्यापक की नियुक्ति, शारीरिक शिक्षा का कार्यक्रम, स्वास्थ्य सेवाएँ आदि। लेकिन, उसमें वे केवल लाभार्थी के रूप में ही समझे जाते हैं न कि विद्यालय प्रबंधन के अभिकर्ता के रूप में। इस तरह, विद्यालय प्रबंधन को विद्यार्थियों को शिक्षा देने के संदर्भ में तो समझा जाता है लेकिन विद्यार्थियों को विद्यालय प्रबंधन का अंग नहीं माना जाता है।

अतः विद्यालय के कई कार्यों में विद्यार्थियों को जिम्मेवारी सौंपी जानी चाहिए। इससे कई लाभ है। पहला यह कि कार्य को करने के लिए शिक्षकों को बहुत बड़ी संख्या में कर्ता मिल जाएंगे। साथ ही, विद्यार्थियों को भी यह एहसास होगा कि विद्यालय के संचालन में उनकी भूमिका है। यह एहसास उनमें आत्मविश्वास और

अपनी क्षमताओं को बेहतर बनाने को लेकर उत्प्रेरक का कार्य करेगा। लेकिन, यह समझना भी आवश्यक है कि विद्यार्थियों से विद्यालय प्रबंधन के किन–किन कार्यों में मदद ली जा सकती है। उदाहरण के तौर पर, विद्यालय के संसाधनों को अच्छी तरह से इस्तेमाल करने तथा उनके संधारण को लेकर विद्यार्थियों को कुछ जिम्मेवारी सौंपी जा सकती है। यह देखने में आया है कि कई विद्यालयों में पुस्तकालय तो है लेकिन वह अक्सर बंद रहता है क्योंकि उसके लिए जिम्मेवार शिक्षक अपनी कक्षाओं में शिक्षण करने में व्यस्त रहते हैं या उनके पास कोई अन्य कार्य होता है। इससे विद्यालय के इस बहुमुल्य संसाधन का प्रभावी उपयोग नहीं हो पाता है। अतः विद्यार्थियों से इसके प्रबंधन में मदद ली जा सकती है। इसीप्रकार अन्य कार्यों में भी विद्यार्थियों को प्रबंधन में भागीदारी दी जा सकती है। इस संदर्भ में बिहार के विद्यालयों में चलनेवाले 'बाल–संसद' एवं 'मीना–मंच' के कार्यों को देखा जा सकता है। विद्यालय प्रबंधन पर इनका क्या प्रभाव पड़ा है उसकी झलक निम्नलिखित बॉक्स में दिए गए उदारहण से मिलता है।

मुजफ्फरपुर जिला के अंतर्गत एक विद्यालय है, जहाँ चेतना सत्र की शुरुआत से लेकर छुट्टी होने तक सभी कार्य प्रभावपूर्ण एवं अनुशासित ढंग से होते हैं। उस विद्यालय में 'बाल–संसद' एवं मीना –मंच दोनों के सक्रिय होने से शिक्षकों का कार्यभार कुछ हद तक कम हो गया है, जिससे शिक्षकगण भी काफी लगन से अपना अध्यापन कार्य करते हैं। विद्यालय परिसर की साफ–सफाई से लेकर अनुशासन व्यवस्था को बनाए रखने में 'बाल–संसद' अपनी भूमिका को अच्छी तरह से निभाता है। बाल–संसद के सभी मंत्री अपने कार्यों एवं दायित्वों का संचालन कुशलतापूर्वक करते हैं ; जिससे उस विद्यालय का नाम आसपास के सभी क्षेत्रों में गर्व से लिया जाता है। विद्यालय परिसर में प्रवेश करते ही चारों तरफ हरियाली एवं साफ–सफाई का वातावरण नजर आता है, सभी चीजें व्यवस्थित नजर आती है।

1.5.1.1 बाल संसद की भूमिका

बाल संसद विद्यालय के बच्चे तथा बच्चियों का एक मंच है, जहाँ वे अपने विद्यालय, समाज–परिवार तथा स्वास्थ्य एवं शिक्षा के अपने अधिकारों की बात खुलकर कर सकते हैं। बाल–संसद का उद्देश्य है–बच्चे एवं बच्चियों में जीवन कौशल का विकास करना, नेतृत्व एवं निर्णय लेने की क्षमता का विकास करना, विद्यालय गतिविधियों एवं प्रबंधन में भागीदारी सुनिश्चित करना तथा विद्यालय को आनंददायी, सुरक्षित और साफ–सुथरा रखना।

बाल–संसद का गठन : प्रधानाध्यापक द्वारा विद्यालय के एक शिक्षक को बाल–संसद के लिए संयोजक शिक्षक/शिक्षिका के रुप में दायित्व दिया जाता है। ये शिक्षक/शिक्षिका विद्यालय में प्रत्येक शैक्षिक सत्र के शुरु में बाल–संसद के गठन को सुनिश्चित करते हैं। गठन की एक प्रक्रिया होती है। संयोजक शिक्षक द्वारा पूर्व सूचना देकर विद्यालय के सभी विद्यार्थियों को बुलाया जाता है। सभा में सभी विद्यार्थियों को उनके वर्ग के अनुसार बैठाया जाता है। सभी बच्चों को बाल–संसद के बारे में विस्तार से बताया जाता है। तत्पश्चात् विद्यार्थियों की सभा द्वारा एक प्रधानमंत्री और उपप्रधानमंत्री का चयन किया जाता है, जिसमें से एक पद पर लड़की का होना आवश्यक है। प्रधानमंत्री एवं उपप्रधानमंत्री के चयन के बाद सभी वर्गों के बच्चों को पाँच समूहों में इस प्रकार बाँटा जाता है कि विभिन्न प्रकार के बच्चे सभी समूहों में हो। पाँचो समूहों के नाम महापुरुष, नदियों, फूलों, पहाड़ों, आदि के नाम पर रखे जा सकते हैं। सभी समूह को अलग–अलग बैठाकर, प्रत्येक समूह से एक मंत्री और एक उपमंत्री (जिसमें एक लड़की अनिवार्य रुप से हो) चुनने को कहा जाता है। इन चुने हुए मंत्रियों के समूह से एक प्रधानमंत्री का चुनाव होता है, जिस पर सभी की सहमति होती है।

इसके बाद प्रधानमंत्री द्वारा सभी मंत्री और उपमंत्री की बैठक बुलाई जाती है तथा दायित्वों का बँटवारा किया जाता है। बाल–संसद का कार्यकाल एक वर्ष का होता है। शैक्षनिक सत्र के प्रथम माह में ही इसका गठन अनिवार्य रुप से कर लिया जाता है ।

बाल संसद के मंत्री निम्नवत हैंः–

1. प्रधानमंत्री एवं उप प्रधानमंत्री
2. शिक्षा मंत्री एवं उप शिक्षामंत्री (मीना–मंत्री)
3. स्वास्थ्य एवं स्वच्छता मंत्री और उप स्वास्थ्य एवं स्वच्छता मंत्री
4. जल कृषि मंत्री और उप जल कृषिमंत्री
5. पुस्तकालय एवं विज्ञान मंत्री तथा उप पुस्तकालय एवं विज्ञान मंत्री
6. सांस्कृतिक एवं खेलमंत्री तथा उप सांस्कृतिक एवं खेलमंत्री

इस प्रकार बाल संसद में कुल 12 सदस्य होते हैं। एक प्रधानमंत्री एवं एक उप प्रधानमंत्री के अलावा पाँच मंत्री एवं पाँच उपमंत्री होते हैं। इन सभी मंत्रियों एवं उपमंत्रियों के कार्य का बँटवारा किया रहता है। विद्यालय प्रबंधन के लिए ये सभी मंत्री काफी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

1.5.1.2 मीना मंच की भूमिका

आईए मीना मंच के बारे में जानने से पहले एक उदाहरण पर ध्यान दिया जाए :

पटना जिला के अंतर्गत गुलज़ारबाग में एक मध्य विद्यालय है। इस विद्यालय में किशोरियों का एक समूह है, जिसमें उच्च प्राथमिक विद्यालय के कक्षा 6 से कक्षा 8 की सभी लड़कियां इसकी सदस्य हैं। विद्यालय के पोषक क्षेत्र की सभी किशोरियां (11–14) जो नामांकित, अनामांकित या प्राथमिक शिक्षा पूरी कर स्कूल छोड़ चुकी हैं, मीना–मंच की सदस्य हो सकती हैं। मीना–मंच की किशोरियों का कार्य है घरों में जाकर माता–पिता को लड़कियों को स्कूल में दाखिला कराने के लिए प्रेरित कराना, बच्चियों को प्रतिदिन विद्यालय लाना, प्रभात–फेरी आयोजित करना, संकुल स्तर पर मीना मेला आयोजित करना इत्यादि। मीना मंच के सक्रिय होने से गुलज़ारबाग मध्य विद्यालय की स्थिति काफी अच्छी है। बच्चे सही समय पर स्कूल आते हैं। सभी कार्य सुचारु रुप से संचालित होते हैं।

इस प्रकार, मीना मंच विद्यालय जाने या नहीं जानेवाली किशोरियों का एक ऐसा समूह है, जो बालिका शिक्षा की बाधाओं को दूर कर अपने परिवार में समाज के सामने आदर्श प्रस्तुत करता है। मीना–मंच के प्रमुख उद्देश्य हैं, जो निम्नांकित है। :–

- यह सुनिश्चित करना कि लड़कियाँ सही आयु में स्कूल में दाखिला लें।
- यह सुनिश्चित करना कि लड़कियाँ प्रतिदिन स्कूल आएँ।
- लड़कियों के व्यक्तित्व में निखार लाना।
- यह सुनिश्चित करना कि लड़कियाँ प्रारंभिक शिक्षा पूरी करें।
- लड़कियों में नेतृत्व और सहयोग की भावना विकसित करना।
- शिक्षा से जुड़े मुद्दों पर जागरुकता पैदा करना इत्यादि।

उपरोक्त सारे उद्देश्यों को पूरी करना 'मीना–मंच' के सदस्यों का प्रमुख कार्य है। इसके अलावा भी मीना–मंच की किशोरियों को अन्य बहुत सारे कार्य भी करने पड़ते हैं जो इस प्रकार हैः–

- अनामांकित तथा अनियमित बच्चों की पहचान कर उन्हें विद्यालय से जोड़ने का प्रयास करना।
- लड़कियों को शिक्षा, स्वास्थ्य एवं स्वच्छता के प्रति जागरुक बनाना।
- घरों में जाकर माता–पिता को लड़कियों को स्कूल में दाखिला कराने के लिए प्रेरित करना।
- विद्यालय की गतिविधियों में लड़कियों की भागीदारी बढ़ाना।
- लड़का–लड़की के बीच भेदभाव पर रोक लगाना।
- दहेज–प्रथा एवं बाल–विवाह रोकने के लिए समाज को जागरुक बनाना।
- बालिकाओं के शैक्षिक तथा सामाजिक स्थिति पर मोहल्ला/टोला से बैठकें आयोजित करना।
- मीना–मंच के प्रमुख कार्यों में शामिल हैं– नारा लेखन प्रतियोगिता आयोजित करना, लड़कियों के उल्लेखनीय उपलब्धि पर मीना पुरस्कार देना तथा रोल प्ले, खेल प्रतियोगिता एवं सीरिज आयोजित करना।

मीना–मंच एक सुगमकर्ता शिक्षक या प्रधान शिक्षक की देखरेख में बनाया जाता है तथा उनके मार्गदर्शन में काम यह काम करती है। सुगमकर्ता शिक्षक का काम मंच को सक्रिय बनाना है, मीना–मंच का गठन करना, मंच की बैठक करवाना, गतिविधियों की योजना बनाना तथा सदस्यों को स्वयं निर्णय लेने का मौका देना है। मीना–मंच के सदस्यों द्वारा चुनी गई कोई एक किशोरी प्रेरक के रुप में जानी जाती है, जो मंच के क्रियाकलापों का नेतृत्व करती हैं। हर महीने प्रेरक को बदलना चाहिए जिससे ज्यादा से ज्यादा लड़कियों को नेतृत्व क्षमता के विकास का मौका मिले। प्रेरक स्कूल में पढ़नेवाली लड़की होनी चाहिए। वह सुगमकर्ता शिक्षक के मार्गदर्शन में काम करेगी। मीना प्रेरक को सभी सदस्यों के साथ मिलकर मीना–मंच का कार्य करना चाहिए। मीना–मंच का कुशल संचालन के लिए उन्हें स्कूल की छुट्टी के बाद या मध्याह्यन भोजन के दौरान समय देना चाहिए। सदस्य हर सात दिन में एक बार मिलें। मीना–मंच की सदस्यों को मिलने, अपने गतिविधियों की योजना बनाने और उन पर चर्चा करने के लिए, छुट्टी के बाद, विद्यालय में ही अगर उन्हें एक कमरा दे दिया जाए तो अच्छा रहेगा। मीना–मंच की सदस्या इस कमरे का नाम मीना–कक्ष रख सकती हैं।

इस प्रकार उपरोक्त सारी बातें को ध्यान में रखने पर यह ज्ञात होता है कि प्रत्येक मध्य विद्यालय में अगर यह मंच सक्रिय रुप से अपना कार्य करे तो विद्यालयों का स्वरुप ही बदल जाएगा, उपस्थिति बढ़ने के साथ–साथ बालिकाओं में आत्मनिर्भरता एवं कुशल नेतृत्व की क्षमता का भी विकास होगा, जो एक विकसित समाज के लिए अत्यन्त आवश्यक है ?

बाल–संसद और मीना–मंच ऐसे उदाहरण है जो विद्यालय के प्रबंधन में बच्चों की भूमिका को स्थापित करते हैं। यदि देखें तो इनके माध्यम से विद्यालय की ऐसी समस्याओं का निवारण हो जाता है जिसे शिक्षक या प्रशासन नहीं कर सकता। इसलिए, विद्यालय प्रबंधन में इनकी अनूठी भूमिका को बढ़ावा दिया जाना चाहिए तथा प्रत्येक शिक्षक को इनके प्रति संवेदनशील होना चाहिए। वास्तव में देखें तो बाल–संसद या मीना मंच केवल विद्यालय प्रबंधन ही नहीं बल्कि समाज प्रबंधन में भी बहुमुल्य भूमिका निभाते हैं।

गतिविधि

- आपके विद्यालय में बाल–संसद और मीना मंच की क्या स्थिति है? इसका विश्लेषण करें।
- अपने अध्ययन केन्द्र पर उनके कार्यों के संदर्भ में एक प्रतिवेदन प्रस्तुत करें।
- अध्ययन केन्द्र पर बाल–संसद तथा मीना मंच के कुछ बच्चों को आमंत्रित करें तथा उनसे विद्यालय प्रबंधन के संदर्भ में चर्चा करें।
- प्रत्येक अध्ययन केन्द्र के प्रशिक्षु सामुहिक रूप से बाल–संसद और मीना मंच द्वारा किए गए कुछ सराहनीय कार्यों का दस्तावेजीकरण करें।
- आप विद्यालय प्रबंधन के दृष्टिकोण से बाल संसद और मीना मंच में क्या परिवर्तन करना चाहेंगे। इस संदर्भ में आपने अध्ययन केन्द्र पर चर्चा करें।

1.5.2 विद्यालय प्रबंधन में प्रधान–शिक्षक/प्रधानाचार्य एवं शिक्षकों की भूमिका

विद्यालय प्रबंधन में प्रधानाचार्य एवं शिक्षकों की भूमिका सबसे सक्रिय होती है। किसी भी विद्यालय में इन दोनों कारकों की जो स्थिति होती है, उसपर विद्यालय के कार्यकलाप एवं गतिविधियां टिकी होती हैं। विद्यालय में प्रधानाचार्य की कुछ महत्वपूर्ण प्रबंधात्मक भूमिकाए हैं जिसे वह शिक्षकों की मदद से संचालित करते हैं। प्रत्येक शैक्षिक संस्था के प्रधान का प्रमुख दायित्व विद्यालय के लिए योजना निर्माण करना होता है। उसे अपने कर्त्तव्यों तथा दायित्वों को वर्षभर के लिए नियोजित करना पड़ता है। जैसे :– विद्यालय सत्र शुरु होने से पहले बच्चों के नामांकन के संबंध में निर्णय लेना, साथ ही उन समितियों का निर्माण करना जिनको यह कार्य सौंपना है कि किस कक्षा में कितने छात्रों को प्रवेश देना है आदि। सत्र के शुरु होने से पहले प्रधानाचार्य का यह भी दायित्व होता है कि वह यह भी देखे कि फर्नीचर, अन्य साज–सज्जा, पुस्तकालय में पुस्तकों आदि की उपलब्धता है या नहीं। यदि नहीं है, फर्नीचर इत्यादि की मरम्मत पर ध्यान देना, आवश्यक रजिस्टरों तथा फाइलों आदि का प्रबंध करना उसकी जिम्मेवारी होती है।

प्रधानाचार्य का यह भी एक दायित्व होता है कि वह विद्यालय संगठन को सुचारु रुप से चलाने के लिए सत्र के दौरान तथा सत्र की समाप्ति पर विशेष ध्यान दें। प्रधानाध्यापक को सत्र के दौरान कुछ कार्यों की व्यवस्था शिक्षकों के साथ मिलकर करनी होती है जैसे– शिक्षण कार्य का संगठन, विभिन्न पाठ्यक्रम सहगामी क्रियाओं का संगठन, विद्यालय अभिलेखों, छात्रों के अभिलेखों, छात्रों के लिखित कार्य आदि। इसके साथ ही, वार्षिक खेलकूद दिवस, अभिभावक दिवस, सांस्कृतिक कार्यक्रम तथा वार्षिक पुरस्कार वितरण दिवस आदि का आयोजन करना, छात्रों के वार्षिक प्रतिवेदन तैयार करना, अगले सत्र की तैयारी के लिए आवश्यक कदमों पर विचार–विमर्श करना तथा रख–रखाव एवं विकास से संबंधित मामलों पर विचार–विमर्श करने में भी प्रधानाचार्य एवं शिक्षकों की विशेष प्रबंधात्मक भूमिका होती है।

प्रधानाध्यापक को विद्यालय की प्रगति के लिए समय–समय पर एक कुशल पर्यवेक्षक की भूमिका को भी निभाना पड़ता है। वह वर्ग में शिक्षकों के कार्यों का निरीक्षण करते हैं तथा कभी–कभी शिक्षकों के कक्षा में बैठकर उनके पढ़ाने की शैली पर विचार–विमर्श भी करते हैं। वह प्रयोगशाला में पर्याप्त उपकरणों पर ध्यान देते हैं तथा विद्यालय की साफ–सफाई पर ध्यान देते हैं। विद्यालय में अनुशासन बनाए रखना

प्रधानाध्यापक का मुख्य कर्त्तव्य है। वह, यह अनुशासन शिक्षकों में, छात्रों में तथा अन्य कर्मचारियों के बीच स्थापित करते हैं।

प्रधानाध्यापक को विद्यालय प्रबंधन में एक निर्देशक की भूमिका को भी निभाना पड़ता है। यह निर्देशन कई क्षेत्रों में दी जा सकती है, जो इस प्रकार है—शैक्षिक एवं शौक्षिकेत्तर क्षेत्र में करियर के चुनाव के संबंध में व्यत्तिगत निर्देशन जो छात्रों को, अभिभावकों को एवं शिक्षकों को दी जा सकती है। अभिभावकों को छात्रों के ऊपर अनावश्यक दबाव न बनाते हुए उनकी रुचि एवं योग्यता के अनुकूल विषयों के चुनाव के लिए निर्देशन देना भी प्रधानाध्यापक को कभी—कभी जरुरी हो जाता जो छात्रों के भविष्य के लिए आवश्यक होता है।

प्रधानाध्यापक को अन्य कार्यों के अलावा विद्यालय के कुशल संचालन के लिए अनेक व्यक्तियों से संपर्क स्थापित करना पड़ता है। यह संपर्क शिक्षकों से, छात्रों से, अधिकारियों से, अभिभावकों से तथा समाज एवं समुदाय से होता है। प्रधानाध्यापका शिक्षकों से विचार —गोष्ठियों, अनौपचारिक बैठकों तथा कक्षा —पर्यवेक्षण के लिए संपर्क करते हैं। प्रधानाध्यापक को अनेक सरकारी अधिकारियों जैसे →विद्यालय निरीक्षक, जिलाधीश आदि से संपर्क स्थापित करना पड़ता है। छात्रों को समझने तथा उनकी विशिष्ट समस्याओं को जानने के लिए प्रधानाध्यापक को अभिभावकों से भी संपर्क करना पड़ता है। इसके अलावा अनेक सामाजिक कार्यकर्ताओं से भी उनको संपर्क स्थापित करना पड़ता है।

प्रधानाध्यापक सर्वप्रथम एक शिक्षक है और फिर प्रशासक। प्रधानाध्यापक द्वारा शिक्षण कार्य न केवल शिक्षकों के मार्गदर्शन के लिए आवश्यक है बल्कि यह छात्रों से संपर्क का सर्वोतम साधन है। शिक्षकों के शैक्षणिक स्तर को उन्नत बनाने के लिए कभी—कभी उन्हें वैकल्पिक क्लास भी लेना चाहिए ताकि शिक्षकों का वे मार्गदर्शन कर सके। इसके अतिरिक्त वह शिक्षकों को विभिन्न सेमिनारों, वर्कशापों आदि में भाग लेने के लिए भेजे।

इस प्रकार, हम देखते हैं कि एक प्रधानाध्यापक को अनेकों कार्य करने पड़ते हैं। इन सभी कार्यों के कुशलतापूर्वक संचालन के लिए उनमें उत्तम स्वास्थ्य, उच्च चरित्र, प्रभावशाली व्यक्तित्व, सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार, आशावादी दृष्टिकोण, नेतृत्व—गुण, समायोजन शक्ति तथा व्यावसायिक ज्ञान आदि गुणों का होना अपेक्षित है। उपराक्त सभी आवश्यक गुणों का एक शिक्षक के लिए भी होना आवश्यक है।

कारक होने के साथ—साथ, प्रधानाचार्य एवं शिक्षकों के पास विद्यालय के प्रबंधन का अपना—अपना विचार भी होता है जिसके अनुरूप वे कार्य करते हैं। विद्यालय के प्रबंधन में जो विचार प्रबल हाते हैं, उनकी छवि विद्यालय के हर कामकाज में मिलती है। इस संदर्भ में प्रधानाचार्य की भूमिका सबसे अहम है क्योंकि उसके विचारों का विद्यालय प्रबंधन पर विशेष प्रभाव पड़ता है। प्रधानाचार्य विद्यालय का नेतृत्व करता है। वह शैक्षणिक कार्यों में शिक्षकों का मार्गदर्शन करके उनके शैक्षणिक स्तर को ऊँचा उठाता है। प्रधानाचार्य अपने कुशल संचालन से विद्यालय एवं समाज के बीच संबंध स्थापित करता है। प्रधानाचार्य का पद विद्यालय की संरचना के लिए बहुत महत्त्वपूर्ण होता है और इस पद पर आसीन होनेवाले व्यक्ति में कुछ विशिष्ट गुणों का होना आवश्यक है। वे गुण क्या हो सकते हैं, आइए इसे अगले पृष्ठ पर दिए गए उद्धरण में उल्लेखित दो विद्यालयों की घटनाओं के माध्यम से समझे।

विद्यालय–1	विद्यालय–2
आज विद्यालय को खुले दो घंटे हो चुके हैं। विद्यालयों के शिक्षकों में से दो शिक्षक अभी तक नहीं आए हैं। प्रधानाचार्या ने इसका संज्ञान सुबह ही प्रातःकालीन सभा में ले लिया था और यह सोंच रही थी कि शिक्षकों के अचानक न आने का क्या कारण हो सकता है। इसके साथ ही, यह भी सोंच रहीं थी कि उनके द्वारा जिन कक्षाओं में शिक्षण किया जाता है, उसकी कक्षा का प्रबंधन कैसे किया जाए। जैसे ही तीसरी घंटी बजी, तो पांचवी कक्षा के बच्चे उनके पास आ गए जिसमें न आए हुए शिक्षक की घंटी थी। प्रधानाचार्य ने यह सोंचा कि चूंकि शिक्षक अभी तक नहीं आए हुए हैं इसलिए वे स्वयं जाकर इस कक्षा में शिक्षण करेंगी। उन्होंने ऐसा ही किया। उसी तरह जब दूसरे शिक्षक की घंटी किसी अन्य कक्षा में पड़ी तो उसमें भी जाकर शिक्षण किया। एक समय तो ऐसा आया कि उन्हें दोनों कक्षाओं को साथ बिठाकर कक्षा लेनी पड़ी। लेकिन, प्रधानाचार्य ने कक्षा में बच्चों को ऐसे कार्यों को समूह में करने को दिया कि सबने एक दूसरे से बहुत कुछ सिखा। इसतरह, विद्यालय में दो शिक्षकों के न आने से इसके शिक्षण–अधिगम के कार्यों पर कोई खास प्रभाव नहीं पड़ा। प्रधानाचार्या ने स्वयं उसे सम्भाल लिया और शिक्षकों को यह सूचना भी दे दी कि उनकी अनुपस्थिति में उन्होंने कक्षा में क्या किया।	विद्यालय के खुलते ही, प्रधानाचार्य को यह सूचना मिली कि उनके दो शिक्षक आज विद्यालय नहीं आ सकेंगें। इसपर उन्होंने झल्लाते हुए कहा कि फिर कक्षाओं को कौन पढ़ाएगा। उन्होंने अन्य शिक्षकों को अपनी–अपनी कक्षाओं में जाने को कहा और वे कक्षाएं जिनके शिक्षक नहीं आ पाए थे उन्हें सख्त हिदायत दी कि वे चुपचाप अपनी कक्षा में बैठे रहे। बाद में उन्होंने, बगल के एक शिक्षक को कह दिया कि वे यह देखते रहे कि उन कक्षाओं में शोरगुल ना हो। जब भी उन कक्षाओं से थोड़ा शोर सुनाई देता तो वे उन शिक्षकों को कोसने लगते जो आज विद्यालय नहीं आ पाए। प्रधानाचार्य इस बात के लिए अति चिंतित थे कि शिक्षकों के न आने से आज विद्यालय में बच्चों की पढ़ाई सुचारू ढंग से नहीं हो पायी। इसके साथ ही वे यह भी सोंच रहे थे कि उन शिक्षकों को इसका क्या दण्ड दिया जाए। क्या उन्हें विद्यालय के कुछ ऐसे कार्यों को अतिरिक्त तौर पर करने के लिए कह दिया जाए या फिर कल जब वे विद्यालय आएंगे तो उनसे ज्यादा घंटी पढ़वायी जाए। अंत में उन्होंने यह मन बनाया कि उन शिक्षकों की शिकायत वे अपने ऊपर के अधिकारी से करेंगे क्योंकि वे बिना खबर किए विद्यालय नहीं आए। इसप्रकार, विद्यालय में पूरा दिन गुजर गया और अंत में बच्चे छूट्टी होने पर घर चले गए।

आप विद्यालय–1 और विद्यालय–2 के प्रधानाध्यापकों के नेतृत्व गुण को किस प्रकार देखेंगे। उनके प्रबंधात्मक नजरिए में क्या अंतर है और इसका विद्यालय के ऊपर क्या प्रभाव पड़ सकता है। विद्यालय–1 और 2, दोनों में एक जैसी समस्या आयी, दोनों के प्रधानाचार्य चिन्तित हुए लेकिन दोनों ने इस समस्या से निपटने का दो अलग–अलग तरीका अपनाया। उपरोक्त उद्धरण के माध्यम से इस बात को दर्शाने पर जोर नहीं है कि कौन सा प्रधानाध्यापक अच्छा है बल्कि यह समझने पर जोर है कि प्रधानाध्यपकों के प्रबंधात्मक नजरियों में अंतर होने से उनके द्वारा लिए गए निर्णयों में भी अंतर होता है।

विद्यालय प्रबंधन में शिक्षकों की क्या भूमिका हो सकती है उसकी झलक निम्नलिखित उदाहरण से मिलता है जिसमें शिक्षिका रीना द्वारा विद्यालय की एक समस्या के समाधान के लिए कुछ उपाय किए गए।

रीना बिहार के एक गांव में प्राथमिक विद्यालय की प्रधान–शिक्षिका हैं। उन्होनें यह पाया कि स्कूल की समयावधि और पाठ्यक्रम पूरा करने के दबाव के कारण रचनात्मक गतिविधियों के लिए बच्चों के पास बहुत कम समय होता है। साथ ही वह स्कूल में विद्यार्थियों की उपस्थिति के लिये भी चिन्तित थी। उन्होंने इन दोनों समस्याओं के मध्य यह सम्बंध भी दिखा कि रचनात्मक गतिविधियों के न होने के कारण विद्यालय में बच्चों की उपस्थिति कम होती जा रही है।

अतः इस समस्या से निपटने के लिये प्रधान शिक्षिका ने अपने अन्य शिक्षकों के सलाह से एक युक्ति अपनायी, जिसके अंतर्गत विद्यालय की समय–सारणी को इस प्रकार से पुनर्निर्मित किया गया कि बच्चों को प्रत्येक सप्ताह इतना समय मिल सके कि वे अन्य कार्यों के साथ–साथ रचनात्मक कार्यों में भी अपनी सक्रिय भागीदारी निभा सके। समयसारणी में शिक्षकों के द्वारा खेलकूद और अन्य गतिविधियों को भी इस प्रकार से समाहित किया गया कि बच्चे विद्यालय के ओर आकर्षित हो सके। साथ–साथ सभी शिक्षकों ने इस बात का भी निर्धारण कर लिया कि किस रचनात्मक कार्यों को वे विशेष भूमिका निभाएंगे। इससे यह हुआ कि विद्यालय में पाठ्यचर्चा के साथ–साथ कई तरह के रचनात्मक कार्यों को भी बच्चों को सीखने का मौका मिलने लगा और स्वयं शिक्षकों के शिक्षण पर भी इसका प्रभाव पड़ा। बच्चों की संख्या भी बढ़ी और अपने अनूठे प्रबंधात्मक समय–सारणी के कारण विद्यालय का नाम भी प्रसिद्ध हुआ। वैसे लोग या अधिकारी जो इस प्रकार के नवाचारी बदलाव को प्रबंधन के खिलाफ मानते थे, वे भी इसकी प्रशंसा कर रहे थे।

ऐसा इसलिए सम्भव हो पाया क्योंकि सभी शिक्षकों ने एक समूह के तौर पर समस्या के समाधान हेतु एकसाथ मिलकर काम किया।

अतः, उपरोक्त उद्धरण के आधार पर यह कहा जा सकता है कि प्रधानाचार्य के नेतृत्व की सफलता का आधार शिक्षकों के प्रबंधात्मक भूमिका पर निर्भर है। साथ ही, यह कहना भी पूरी तरह से सत्य नहीं है कि विद्यालय का एक मात्र नेतृत्वकर्ता केवल प्रधानाचार्य ही होता है। यदि वास्तविक रूप में देखा जाए तो विद्यालय के अलग–अलग कार्यों में नेतृत्व की अलग–अलग छवि मिलती है जिसे विद्यालय के शिक्षक, विद्यार्थी या अन्य कर्मी भी निभा रहे होते हैं। ऐसा इसलिए सम्भव हो पाया है क्योंकि विद्यालय के प्रबंधन में केन्द्रिकृत नियंत्रणकारी विचारधारा के स्थान पर विकेन्द्रित व लोकतांत्रिक विचारधारा को महत्व दिया जा रहा है। अर्थात, प्रधानाचार्य विद्यालय के कार्यों का नियंत्रणकर्ता नहीं है बल्कि प्रबंधनकर्ता है। यदि विद्यालय प्रबंधन के दृष्टिकोण से देखें तो प्रधानाचार्य और शिक्षकों के कार्य एक दूसरे के पूरक हैं अर्थात दोनों के सम्मिलित प्रयास से ही प्रबंधन होता है।

गतिविधि

- आपके विद्यालय में प्रधान–शिक्षक और अन्य शिक्षकों के मध्य किस प्रकार का तालमेल है, इसका विश्लेषण करें।
- आपके अनुसार, एक प्रधान–शिक्षक में प्रबंधन के क्या–क्या गुण होने चाहिए? अपने अध्ययन केन्द्र पर चर्चा करें।
- अपने विद्यालय के किसी घटना का विश्लेषण करें जिसमें अपने प्रबंधात्मक नेतृत्व किया।

1.5.3 विद्यालय प्रबंधन में समुदाय की भूमिका

विद्यालय प्रबंधन की संरचना में समुदाय की भूमिका का भी बहुत महत्त्वपूर्ण स्थान है। विद्यालय प्रबंधन में यदि समुदाय अपनी भूमिका सही तरीके से नहीं निभाएगा तो प्रभावी प्रबंधन नहीं हो पाएगा। इसलिए, समुदाय को विद्यालय के सभी कार्यक्रमों के उचित संचालन में अपना पूर्ण सहयोग देना चाहिए। समुदाय के उचित सहयोग से विद्यालय अपनी प्रगति की ओर बढ़ता है। प्रबंधन में समुदाय की भूमिका से विद्यालय का चौतरफा विकास होता है। इसे एक उदाहरण द्वारा इस प्रकार समझा जा सकता हैः

रोहतास जिले के एक गाँव में दो स्कूल हैं। दोनों स्कूलों में सभी मूलभूत सुविधाएँ है, परंतु इसके बावजूद दोनों विद्यालय की स्थितियाँ भिन्न हैं।

परिस्थिति 1	परिस्थिति 2
पहले विद्यालय में भवन, प्रधानाचार्य तथा शिक्षक सभी पर्याप्त हैं, इसके बावजूद कुछ वर्गों में उपस्थिति काफी कम रहती है। इसकी सुधि लेनेवाला भी कोई नहीं है। शिक्षक और प्रधानाचार्य की कोशिशों के बावजूद उपस्थिति पर्याप्त नहीं रहती है। क्यों ? समुदाय के लोगों द्वारा भी इस संबंध में कोई हस्तक्षेप नहीं किया जाता है।	दूसरे विद्यालय में भी सभी आवश्यक मूलभूत सुविधाएँ हैं । बच्चों का नामांकन भी पर्याप्त संख्या में है। इस विद्यालय में सभी वर्गों में बच्चे आते हैं। उपस्थिति को लेकर विद्यालय प्रबंधन को कोई दिक्कतों का सामना नहीं करना पड़ता है। जैसे ही कोई बच्चा अनुपस्थित रहता है तो स्थानीय समुदाय के हस्तक्षेप से वह विद्यालय में वापस आ जाता है। विद्यालय समय–समय पर शिक्षक –अभिभावक की बैठक या अन्य सांस्कृतिक कार्यक्रमों में भी समुदाय से संबंध बनाए रखता है और विभिन्न आयोजनों में भी समुदाय की सक्रिय भूमिका रहती है।

सोचिए! आपके विचार से दोनों विद्यालयों में से बेहतर विद्यालय कौन है तथा पहली परिस्थिति वाले विद्यालय को दूसरी परिस्थिति वाले विद्यालय की तरह बनने में क्या बाधाएँ हैं। आपने विचार किया होगा तो पाया होगा कि दूसरी परिस्थिति में समुदाय की सक्रिय भूमिका के कारण ही विद्यालय प्रबंधन समुचित रुप से अपना काम कर पा रहा है। समुदाय नामांकन के समय, उपस्थिति के समय तथा विद्यालय में मध्याह्रन भोजन में भी अपना सक्रिय भूमिका निभाता है। जैसे–यदि किसी विद्यालय में नामांकन के बावजूद बच्चे स्कूल को नहीं जाते हैं तो समुदाय के लोगों को चाहिए वह विद्यालय प्रबंधन से इस विषय पर बात करके कारण को जाने और उसके निवारण की कोशिश करें। यदि विद्यालय के शिक्षक समय पर अपनी कक्षा में नहीं जाते हैं तो प्रधानाचार्य से बात करके यह कहना चाहिए कि सभी शिक्षक सही समय पर अपने वर्ग में जायें और समय–सारणी के अनुरुप अपना कार्य ईमानदारी से करें । इसी प्रकार, यदि मध्याह्रन भोजन का कार्य विद्यालय प्रबंधन ठीक से नहीं करता है तो समुदाय के लोगों को आगे आकर इसकी समुचित जानकारी प्रबंधन से प्राप्त करनी चाहिए कि हर दिन के मेन्यू के अनुसार बच्चों को खाना दिया जा रहा है या नहीं। यदि ऐसा नहीं है तो समुदाय को हस्तक्षेप करके इस कार्य को सुचारु रुप से चलाया जा सकता है।

यदि विद्यालय को कभी स्थानीय लोगों के कारण चुनौतियों का सामना करना पड़ता है तो समुदाय के कुछ गणमान्य लोगों के हस्तक्षेप से मदद मिलती है। इसके साथ ही, यदि विद्यालय के ही कुछ कर्मचारी प्रबंधन पर अनावश्यक दबाव बनाते हुए अपनी मनमानी करना चाहते हैं तो समुदाय के लोग उन्हें ऐसा करने से रोकते हैं और प्रबंधन में शांति एवं अनुशासन बनाए रखने में मदद करते हैं ?

इस प्रकार विद्यालय प्रबंधन में समुदाय की भूमिका महत्वपूर्ण हैं। लेकिन, समुदाय की यह भूमिका तभी निर्मित हो पाएगी जब विद्यालय के शिक्षक इसके प्रति संवेदनशील हों तथा विद्यालय में समुदाय की भागीदारी को महत्वपूर्ण मानते हों।

गतिविधि

- आपके विद्यालय के प्रति समुदाय का क्या दृष्टिकोण है? कुछ लोगों का साक्षात्कार लेकर पता लगाएं तथा अध्ययन केन्द्र पर चर्चा करें।
- अपने विद्यालय के कार्यों में आप समुदाय से किन–किन मामलों में मदद ले सकते हैं, इसका विश्लेषण करें।

विद्यालय प्रबंधन की संरचना में समुदाय की भूमिका के अंतर्गत स्थानीय प्रशासन की संस्थाओं जैसे–ग्राम पंचायत, प्रखंड–पंचायत, जिला–परिषद्, नगरपालिका, नगर–पंचायत व नगर–निगम आदि की महत्त्वपूर्ण भूमिका दिखाई दे रही है। इस संदर्भ में आप द्वितीय सत्र में अध्ययन कर चुके हैं। इसके अलावा, विद्यालय प्रबंधन में कई प्रशासनिक संस्थाओं की भी भूमिका होती है जिनके विषय में चौथी इकाई में विस्तार से वर्णन किया गया है।

1.6 विद्यालय में समय प्रबंधन

यदि देखें तो विद्यालय में प्रबंधन की प्रक्रिया समय के सापेक्ष चलनेवाली प्रक्रिया है। अर्थात, विद्यालय में किसी कार्य को सही तरीके से करना ही महत्वपूर्ण नहीं है बल्कि उसे सही समय पर करना महत्वपूर्ण है। अतः विद्यालय में दिन के शुरूआत से इसकी आखिरी घंटी तक का समय प्रबंधन बहुत ही योजनबद्ध तरीके से किया जाना जरूरी है। विद्यालयों में सुबह–सुबह चेतना सत्र को कराया जाता है, जिससे दैनिक समय प्रबंधन की शुरूआत होती है। इसके साथ–साथ दैनिक समय सारणी का निर्माण, वार्षिक कैलेण्डर का निर्माण तथा उसमें विभिन्न प्रकार के आयोजनों को व्यवस्थित करना, बहुत ही जटिल कार्य है जिसमें समय के साथ–साथ विभिन्न मानकों एवं आवश्यकताओं का ध्यान रखा जाता है। इस संदर्भ में आगे के खण्डों में व्याख्या की गई है।

1.6.1 विद्यालय में चेतना सत्र से दैनिक प्रबंधन की शुरूआत

विद्यालय में शैक्षिक कार्यदिवस की शुरूआत चेतना सत्र से होती है, जिसमें प्रधानशिक्षक, शिक्षक–शिक्षिकाओं, बाल संसद, मीना मंच एवम् सभी विद्यार्थियों की भूमिका होती है। निर्धारित समयानुसार विद्यालय खुलने के साथ ही वर्ग–कक्ष, विद्यालय परिसर एवम् आस–पास की साफ–सफाई, परिसर में

निर्धारित स्थल पर एकत्रित होकर व्यायाम, प्राणायाम, प्रार्थना, समाचार वाचन, प्रेरक प्रसंग, प्रधान शिक्षक की उद्घोषणा, शारीरिक स्वच्छता जाँच, सूचना प्रसारण आदि चेतना सत्र के दौरान होनेवाली गतिविधियाँ है। इन गतिविधियों का बेहतर प्रबंधन एवं संचालन विद्यार्थियों को न सिर्फ दिनभर विद्यालय में सम्पादित होनेवाले क्रियाकलापों के लिए शारीरिक एवं मानसिक रूप से तैयार कर देता है, बल्कि आनेवाली दिवसों की पूर्व तैयारी का अवसर भी प्रदान करता है।

विद्यालय में दिन की शुरूआत प्रायः निम्नलिखित गतिविधियों से की जाती है। आप अपने विद्यालय के संदर्भ में बताएं की इनमें से किन गतिविधियों को वहां किया जाता है और कैसे किया जाता है :

साफ–सफाई :

P.T (व्यायाम):

प्रार्थना :

समाचार वाचन :

शारीरिक स्वच्छता जाँच :

सूचना :

कुछ विद्यालयों में 'चेतना सत्र' आयोजित करने का अभिप्राय महज प्रार्थना का आयोजन मान लिया जाता है, आपकी इस संदर्भ में क्या राय है।

किसी भी विद्यालय के चेतना सत्र का सफल संचालन उस विद्यालय की सफलता के सूचक होते हैं, क्योंकि रूचिकर एवं योजनाबद्ध तरीके से संपादित चेतना सत्र का प्रभाव विद्यालय एवं कक्षायी गतिविधियों के प्रबंधन पर सकारात्मक रूप से पड़ता है।

1.6.2 समय सारणी

विद्यालय प्रबंधन के क्षेत्र में समय प्रबंधन का काफी महत्त्वपूर्ण स्थान होता है। किसी भी विद्यालय में अनेक क्रियाएँ चलती है, जिसके अंतर्गत विभिन्न विषयों का शिक्षण कार्य होता है, सहगामी क्रियाओं की व्यवस्था होती हैं तथा इसी प्रकार के अन्य शैक्षणिक कार्य होते हैं। विद्यालय की सफलता इन विभिन्न क्रियाओं के समुचित संचालन पर निर्भर करती है, इन सब कार्यो को योजनाबद्ध रूप में संचालित करने के लिए विद्यालय जो व्यवस्था करते हैं, वही समय–सारणी कहलाती है। समय–सारणी से समय तथा श्रम का सदुपयोग होता है।

समय–सारणी से हमें यह भी पता चल जाता है कि विद्यालय में किस दिन, किस समय तथा किस कक्षा के द्वारा, किसके नेतृत्व में कौन सी क्रिया संचालित होती है। विद्यालय में कितने छोटे कार्य होना है। किस विषय तथा क्रिया को कितना समय देना है, यह सब समय–सारणी बताती है। समय–सारणी एक ऐसा दर्पण है, जिसमें विद्यालय के समस्त शैक्षणिक एवं पाठ्यसहगामी कार्यक्रम प्रतिबिम्बित होते हैं। समय–सारणी के महत्व को निम्नांकित बिंदुओं द्वारा समझ सकते हैं ।

- समय–सारणी से विद्यालय के अनेक कार्यक्रमों का ज्ञान होता है । इससे हमें पता चलता है कि विद्यालय में कौन कौन सी सहगामी तथा शारीरिक क्रियाएँ चलती हैं, खेलकूद की क्या व्यवस्था है तथा प्रत्येक क्रिया को कितना समय दिया जाता है।

- समय–सारणी के द्वारा विद्यालय के सभी भौतिक एवं मानवीय साधनों का अधिकतम उपयोग किया जा सकता है। समय–सारणी के द्वारा सभी कार्य नियमित समय पर कराए जाते हैं। प्रधानाध्यापक, शिक्षक तथा विद्यार्थी सभी जानते हैं कि उन्हें कब कौन सा कार्य करना है। इससे विद्यालय के कार्यों में नियमितता आती है, अस्त–वयस्तता समाप्त हो जाती है। शिक्षकों की जिम्मेदारियों का सही ढंग से बँटवारा होता है, खेल के मैदान, प्रयोगशाला आदि में सभी कक्षाओं को अपने अपने कार्य करने के लिए सही समय मिलता है। सभी विद्यार्थी हर एक गतिविधि में भाग ले सकते हैं।

- समय सारणी के होने से कोई भी क्रिया ज्यादा देर तक नहीं होती है जिससे ऊब तथा थकान से छुटकारा मिलता है। विषयों के उनकी कठिनाई–स्तर के अनुरूप व्यवस्थित किया जाता है। समय–सारणी से छात्रों में नैतिक गुणों का भी विकास होता है। विद्यार्थी समय के महत्व को जानने लगते हैं, उनमें नियमितता आती है तथा वे विभिन्न साधनों एवं समय के बीच समन्वय स्थापित करने में सहायता मिलती है तथा शिक्षकों एवं छात्रों को हर समय विभिन्न क्रियाओं मे व्यस्त रखा जाता है।

- समय–सारणी से शिक्षक तथा थ्वद्यार्थी दोनों यह समझ जाते हैं कि प्रत्येक विषय का अध्ययन–अध्यापन के लिए कितना समय लगता है। इससे सभी शिक्षकों के कार्यभार में समुचित बँटवारा हो जाता है। बीच–बीच में शिक्षकों को विश्राम का अवसर मिलता रहता है।

इस प्रकार हम यह अच्छी तरह जान जाते हैं कि समय सारणी के अभाव में किसी विद्यालय को व्यवस्थित रूप से संचालित नहीं किया जा सकता है।

समय–सारणी के महत्व के बारे में इस बात का चर्चा करना भी जरूरी है कि समय–सारणी का निर्माण कैसे किया जाता है और इसके निर्माण में कौन–कौन सी सावधानियाँ बरती जानी चाहिए। समय–सारणी को बनाने समय विभागीय नियमों का पालन, विषयों की पाठ्यचर्या, साधनों की उपलब्धता, थकान का ध्यान तथा लचीलापन का ध्यान रखना अत्यंत आवश्यक है, समय–सारणी में विभागीय नियमों का पालन से अर्थ है कि शिक्षा विभाग के नियमों का पालन अर्थात वर्ष में कितने दिन विद्यालय खुला रहेगा, किस विषय को कितने कालांश दिए जाएँगें। विषयों की पाठ्यचर्या से तात्पर्य है कि किन विषयों को समय–सारणी में अधिक समय दिया जाए तथा उनका शिक्षण का सबसे उचीत समय क्या होगा। लचीलेपन से अर्थ है कि समय–सारणी कठोर तथा स्थिर नहीं होनी चाहिए बल्कि इसमें आवश्यकता पड़ने पर परिवर्तन करने की गुंजाइश होनी चाहिए जैसे– अत्यधिक गर्मी पड़ने की वजह से बिहार सरकार द्वारा समय में परिवर्तन कर दिया जाता है। प्राथमिक एवं मध्य विद्यालय प्रातः 9 से 8 बजे के बजाए सुबह 6:30 से 11:30 बजे तक चलती है।

साधनों की उपलब्धता मतलब मानवीय एवं भौतिक साधनों को ध्यान में रखते हुए समय–सारणी का निर्माण किया जाना चाहिए। शिक्षक–कक्ष, प्रयोगशाला–भवन, उपकरण सारणी के निर्माण में विद्यार्थियों तथा शिक्षकों की थकान का भी ध्यान रखना चाहिए। इसी प्रकार विद्यालय में कुछ समय विद्यार्थी ज्यादा तरोताजा रहते हैं तथा उनकी ग्रहणशीलता अच्छी रहती है तो कुछ समय बाद वे थकान एवं नीरसता का अनुभव करने

लगते हैं। अतः कई बार, एक ही प्रकृति के बहुत सारे विषयों को समयसारणी में एक साथ नहीं रखा जाना चाहिए। इस प्रकार हम देखते हैं कि समय सारणी को बनाते समय उपरोक्त बातों को ध्यान में रखना चाहिए तभी एक संतुलित समय–सारणी का निर्माण हो सकेगा।

साथ ही, यह भी समझने की जरूरत है कि समय–सारणी को लेकर अलग–अलग विद्यालयों में अलग–अलग मान्यताएं हैं। निम्नलिखित उदाहरण में आप दो विद्यालयों में समय सारणी को लेकर मान्यताओं को समझेंगे।

अभिषेक और आशुतोष दो अलग–अलग विद्यालय में पढ़ते है। अभिषेक के विद्यालय में हर दिन क्या होना है इसे एक दिन पहले ही बता दिया जाता है और उसपर विद्यार्थियों से राय ले कर संशोधन भी कर लिया जाता है। इसके कारण अभिषेक के विद्यालय में कक्षा–शिक्षण के साथ–साथ वाद–विवाद प्रतियोगिताएँ, खेलकूद, बागवानी तथा अन्य पाठ्यसहगामी क्रियाएँ भी बहुत ही अच्छी तरह से की जाती हैं। परंतु, इसके ठीक विपरीत आशुतोष के विद्यालय में विषयों की पढ़ाई एक निर्धारित समय–सारणी के आधार पर की जाती है जिसमें पाठ्य सहगामी क्रियाओं या अन्य आकस्मिक गतिविधियों के लिए समय का प्रबंधन नहीं होता है। अतः वहां के विद्यार्थी इन कार्यों को प्रभावी ढंग से नहीं कर पाते हैं। यदि देखें तो अभिषेक का विद्यालय एक लचीले समयसारणी को बेहतर मानता है ताकि वह अपनी आवश्यकतानुसार समय को प्रबंधित कर सके वहीं, आशुतोष के विद्यालय में निश्चित समय–सारणी को अच्छा माना जा रहा है।

उपरोक्त उदाहरण के आधार पर आप समय–सारणी के विषय में किस प्रकार का दृष्टिकोण अपनाएंगे। यदि देखें तो दोनों विद्यालयों में समय–सारणी के निर्माण को लेकर समय प्रबंधन के अलग–अलग मान्यताओं को अपनाया गया है। एक के अनुसार, समय का प्रबंधन आवश्यकताओं के अनुसार होना चाहिए तथा उससे सर्वोतम लाभ उठाना चाहिए। वहीं दूसरी मान्यता के अनुसार, एक बार समय प्रबंधन की जो रूपरेखा बन गयी उसी के आधार पर कार्यों को किया जाना चाहिए। अतः देखें तो दोनों ही मान्यताओं का अपना–अपना तर्क है। अतः यह कहा जा सकता है कि समय सारणी के निर्माण के पीछे भी कई सारी मान्यताएं काम करती हैं।

यदि देखें तो समय सारणी को कई आधारों पर निर्मित किया जा सकता है। उनमें से कुछ निम्नलिखित हैं।

1. विद्यालय की संपूर्ण समय–सारणी
2. कक्षा की संपूर्ण समय–सारणी
3. पाठ्यक्रम के अनुसार समय–सारणी
4. शिक्षक समय–सारणी

विद्यालय के अनुसार :– सामान्यतः सरकारी और निजी दो प्रकार के स्कूल हैं। सरकारी स्कूलों में भी भिन्नता देखने को मिलती है। इसलिए इस स्थिति में समय सारणी विद्यालय के जरूरत के अनुसार बनाई जाती है। संपूर्ण समय सारणी में विद्यालय की सभी कक्षाओं, सभी शिक्षकों तथा सभी गतिविधिओं की विस्तृत समय सारणी रहती है। जो आमतौर पर मुख्यध्यापक के टेबुल या उनके कार्यालय में टंगी होती है। जिसे देखकर विद्यालय के सभी कार्य के विषय में एक स्थान से जानकारी प्राप्त की जा सकती है और विद्यालय के कार्यक्रम को एक दृष्टि में देखा जा सकता है।

कक्षा समय सारणी :– इस प्रकार की समय–सारणी कक्षा विशेष के लिए होती है। इसमें कक्षा में पढाए जाने वाले प्रत्येक विषय का उल्लेख होता है। खेलकूद तथा अन्य पाठ्यसहगामी कियाओं का इसमें वर्णन होता है। इसका संबंध कक्षा विशेष के विद्यार्थियों से होता है। जैसे:–किस समय किस विषय की कक्षा होगी, कौन सा शिक्षक उस विषय को पढाएगा। इस समय–सारणी में पढाए जानेवाले प्रत्येक विषय के साथ शिक्षक का नाम लिखा रहता है। कक्षा समय–सारणी हरेक कक्षा के लिए बनाई जाती है। कक्षा समय–सारणी में इस कक्षा में होनेवाले सभी गतिविधिओं का उल्लेख रहता है।

पाठ्यकमानुसार :– सभी विद्यालयों का पाठ्यकम एक जैसा नहीं होता है। कुछ विद्यालय केंद्रीय बोर्ड से तो कुछ राज्य सरकार से संबधित होते हैं। सभी विद्यालयों में समान विषय और वर्ग भी नहीं होते है। अतः विद्यालय में पाठ्यकम के विषयानुसार, समय–सारणी को बनाया जाता है।

शिक्षक समय–सारणी :– इस समय–सारणी का संबंध शिक्षक विशेष से होता है। प्रधानाध्यापक को इस प्रकार के समय–सारणी से शिक्षकों के पूरे दैनिक कार्यों का पता चलता है। इसमें शिक्षकों के नामों के सामने उनका समय–सारणी होता है। इसकी एक प्रति स्टाफ–रूम में होती है और दूसरी प्रति प्रधानाध्यापक के कार्यालय में होती है। प्रत्येक शिक्षक को एक–एक प्रति दिया रहता है। इस सारणी से शिक्षक के कार्यभार की जानकारी होती है कि शिक्षक को प्रतिदिन कितने कालांश होते हैं तथा एक सप्ताह में कुल कितने घंटे पढाने पड.ते हैं। प्रधानाचार्य के लिए यह समय–सारणी अधिक उपयोगी होती है। जब शिक्षक का अवकाश के लिए आवेदन पत्र आता है तो रिक्त कालांश वाले शिक्षकों को उसके स्थान पर लगा देते हैं जिससे उस शिक्षक का वर्ग खाली न जाए और विद्यालय में व्यवस्था बनी रहे। इस समय–सारणी का उपयोग शिक्षकों तथा प्रधानाचार्य को अधिक होता है।

खाली कालांश का समय–सारणी :– इस प्रकार के समय–सारणी में शिक्षकों के अवकाश का वर्णन होता है। इसको देखने से यह पता चल जाता है कि किस समय में कौन शिक्षक खाली है।

खेल का समय सारणी :–इस समय–सारणी में किस कक्षा को किस दिन कौन से खेल में भाग लेना है, इसका विवरण होता है। इसमें खेलकूद की प्रवृति के अनुसार प्रभारी शिक्षक के नाम का भी उल्लेख रहता है। इस प्रकार उपर्युक्त तथ्यों को ध्यान में रखकर, विभिन्न नियमों का पालन करते हुए जब हम समय–सारणी का निर्माण करते हैं तो विद्यालय को व्यवस्थित रूप से संचालित में मदद मिलती है।

1.7.3 शैक्षिक कार्यकमों के आयोजन का कैलेण्डर

प्रायः यह देखा जाता है कि कई विद्यालय शैक्षणिक कार्यकमों को आयोजन से हिचकिचाते हैं तथा वे ऐसे कार्यकमों में कम रूचि लेते हैं। इस तरह के विद्यालयों को कियाशील बनाने के लिए शैक्षणिक कार्यकमों के आयोजन की समय–आधारित रूपरेखा बनाना आवश्यक प्रतीत होता है। इसके साथ ही, राज्य सरकार और शिक्षा विभाग के निर्देशों एवं शिक्षा विभाग द्वारा जारी किए जाने वाले वार्षिक कैलेण्डर के आधार पर विद्यालयों द्वारा शैक्षणिक कार्यकमों के आयोजन की रूपरेखा तैयार की जानी चाहिए। इन कार्यकमों की रूपरेखा बनाते समय यह ध्यान रखना चाहिए कि कार्यकम किस तिथि को आयोजित किया जाना है व कार्यकम में क्या–क्या किया जाना है। नए रुपरेखा बनाते समय राज्य सरकार द्वारा तय किए गए शैक्षणिक आयोजनों को भी ध्यान में रखना चाहिए। इनके अलावा ऐसे कार्यकम आयोजित किए जाने चाहिए जो किसी भी विद्यालय के परिवेश व प्रकृति के अनुकूल हो।

शैक्षणिक कार्यक्रमों के आयोजन की रूपरेखा में निम्न शैक्षणिक कार्यक्रम शामिल किए जा सकते हैं :–

नामांकन दिवस – हरेक विद्यालय में नामांकन दिवस का आयोजन किया जाना चाहिए जिसमें यह लक्ष्य रखा जाना चाहिए कि अधिक–से अधिक विद्यार्थियों को विद्यालय में नामांकित किया जाए। नामांकन की प्रकिया पूरी होने के बाद एक छोटा सा सामारोह आयोजित किया जाना चाहिए जिसमें नए नामांकित विद्यार्थियों का स्वागत किया जाना चाहिए तथा उन्हें अपने विद्यालय की खास बातों के विषय में बताया जाना चाहिए। इसके लिए विद्यालय के अकादमिक कैलेण्डर में सम्भावित समय निर्धारित होनी चाहिए।

शिक्षक–अभिभावक बैठकें :– विभाग के नियमों एवं आदेशानुसार विद्यालय में शिक्षक–अभिभावक बैठकों का आयोजन किया जाना चाहिए। इन बैठकों में शिक्षकों को अभिभावकों के साथ उनके बच्चों की प्रगति के विषय में चर्चा करनी चाहिए। इस बैठक का समय ऐसा होना चाहिए जिस दिन शिक्षक और अभिभावक सहजता से मिल सकें।

महत्वपूर्ण दिवसों पर विशेष आयोजन :– पूरे देश की तरह सभी विद्यालयों में 15 अगस्त को स्वतंत्रता दिवस तथा 26 जनवरी को गणतंत्र दिवस के रूप में मनाया जाता है। इन दिनों के अवसर पर विद्यालयों में प्रभातफेरीयॉ एवं झांकियॉ निकाली जानी चाहिए और ध्वजारोहन किया जाना चाहिए। इसके लिए विद्यालय में समय प्रबंधन होना चाहिए। इसके साथ ही अन्य कई महत्वपूर्ण दिवस हैं जिन्हें विद्यालय के समय प्रबंधन में पहले से ध्यान रखा जाना चहिए। जैसे–5 सितम्बर को को शिक्षक–दिवस के रूप में मनाया जाता है। 14 नवम्बर को बाल दिवस के रूप में मनाया जाता है। इस दिन शिक्षकों द्वारा बच्चों को शैक्षणिक भ्रमण पर ले जाया जाता है। कई विद्यालयों में बाल दिवस के अवसर पर खेलकूद प्रतियोगिता का आयोजन किया जाता है। विद्यालय में इस सभी आयोजनों को प्रभावी तरीके से करने के लिए समय प्रबंधन करना जरूरी है।

1.7.4 वार्षिक कैलेण्डर

विद्यालय प्रबंधन के क्षेत्र में जितना महत्त्वपूर्ण स्थान समय–सारणाी का है, उतना ही महत्त्वपूर्ण स्थान वार्षिक कैलेण्डर का भी है। जिस प्रकार समय–सारणी से हमें प्रत्येक दिन प्रत्येक कालांश में कौन से विषय की पढाई होगी तथा कौन–कौन से शैक्षिक कार्यक्रम होगें इसका पता चलता है, ठीक उसी प्रकार से वार्षिक कैलेण्डर से हमें पूरे वर्ष भर का ब्यौरा पता चलता है।

वार्षिक कैलेण्डर में पूरे वर्ष भर के लिए निश्चित मुख्य क्रियाओं, शैक्षण्कि और गैर शैक्षण्कि कार्यों का उल्लेख रहता है। इसकी योजना पहले ही बना ली जाती है। वार्षिक कैलेण्डर में निम्न बातें शामिल होनी चाहिए।

- सभी छुट्टियाँ – स्थानीय, सरकारी और लंबी छुट्टियॉ। स्थानीय छुट्टियों के अंतर्गत वे छुट्टियॉ आती है जो वहाँ के स्थान विशेष का कोई पर्व या आयोजन होता है, जैसे सरहुल, लोहड़ी आदि की छुट्टी। राष्ट्रीय छुट्टि में स्वतंत्रता दिवस, गणतंत्र दिवस, गांधी जयन्ति, आदि आते हैं तथा लंबी छुट्टियों के अंतर्गत गीष्मकालीन अवकाशए शीतकालीन अवकाश तथा दशहरा या छठ पर्व की छुट्टी होती है।

- मासिक, त्रैमासिक, वार्षिक एवं सार्वजनिक परीक्षाओं की तिथियाँ। वार्षिक कैलेण्डर में जो मासिक, त्रैमासिक परीक्षाओं होती हैं, उनका उल्लेख इसमें किया जाता है।
- स्कूल के महत्त्वपूर्ण समाराहों जैसे पारितोषिक वितरण, अभिभावक दिवस, शैक्षनिक यात्राएँ, खेल दिवस, वार्षिक मनोरंजन उत्सव, गणतंत्र दिवस आदि। शिक्षा दिवस, बाल दिवस, आदि का उल्लेख किया जाता है।
- जिला, डिवीजन तथा राज्य स्तर पर होनेवाली खेलों की तिथियाँ। इसके अंतर्गत वार्षिक कैलेण्डर में यह योजना पहले ही बना ली जाती है कि अगर क्रिकेट, कबड्डी या खो–खो जैसे खेल का आयोजन जिला या राज्य स्तर पर करना है तो उसकी तिथि कब होगी तथा स्थान कहाँ होगा। इन सबका निर्धारण पहले ही कर लेने से बाद में परेशानियों का सामना नहीं करना पड़ता है।

एक प्रकार से यह कहा जा सकता है कि वार्षिक कैलेण्डर में सभी स्तर के समय–सारणीयां सम्मिलित होते हैं, जैसा की निम्नलिखित चित्र में दर्शाया गया है।

विद्यालय का वार्षिक कैलेण्डर
⇧
सत्र–आधारित कैलेण्डर
⇧
मासिक कैलेण्डर
⇧
साप्ताहिक कैलेण्डर
⇧
दैनिक समय–सारणी

उपरोक्त बातों के अलावा वार्षिक कैलेण्डर में यह भी निर्धारित किया जाता है। नए सत्र का प्रारंभ किस महीने की कौन सी तारीख से होगी। परीक्षाओं का स्वरूप कैसा होगी तथा परीक्षाफल कब प्रकाशित किया जाएगा। वार्षिक कैलेण्डर के द्वारा शिक्षकों को यह आसानी से पता चलता है कि उन्हें कब, क्या कार्य करना है तथा कौन–कौन से कार्य कब समाप्त करना है। वार्षिक कैलेण्डर प्रधानाध्यापक को निर्देशन देती है तथा शिक्षकों का पथ–प्रदर्शन करती हैं। एक अच्छे वार्षिक कैलेण्डर में निम्न विशेषताएॅ होनी चाहिए :–

- अच्छा वार्षिक कैलेण्डर पूरी तरह से लचीला होना चाहिए अर्थात इसमें आवश्यकतानुसार हरेक में परिवर्तन किया जा सके ।
- अच्छा वार्षिक कैलेण्डर सभी कक्षाओं से संबधित तथा सभी क्रियाओं को सम्मिलित करती है।
- वार्षिक कैलेण्डर एक तरह की वार्षिक योजना होती है जिसे शिक्षा विभाग सभी तरह के विद्यालयों, सभी तरह के शिक्षकों व सभी तरह के विद्यार्थिओं के लिए जारी करता है।

इस तरह, विद्यालयों में आयोजित की जानेवाली शैक्षणिक कार्यक्रमों के आयोजन की रूपरेखा बनाना विद्यालय का महत्त्वपूर्ण कार्य है। जो सभी विद्यालयों को अच्छे ढंग से बनानी चाहिए।

गतिविधि

- अपने विद्यालय के समय सारणी का आलोचनात्मक विश्लेषण करें तथा अपनी समझ के आधार पर एक नये समय सारणी का निर्माण करें।
- अपने विद्यालय के बच्चों से समय–सारणी का निर्माण करवाएं और यह विश्लेषण करें कि आपके द्वारा बनाए गए समय–सारणी और उनके द्वारा सुझाए गए समय–सारणी में क्या अंतर है। इसकी चर्चा अध्ययन केन्द्र पर करें।

1.8 विद्यालय में आपदा प्रबंधन एवं सुरक्षा शिक्षा की अवधारणा

बिहार एक ऐसा राज्य है जहां पर कई प्रकार की आपदाओं का संकट हमेशा बना रहता है। सबसे बड़ी आपदा की संभावना तीव्र भुकम्पवाले जोन में होने के कारण है। इसका उदाहरण अभी हाल ही में 2015 के मई महीने में आए भुकम्प का है। इसके साथ ही, राज्य में बाढ़ के कारण भी बहुत गम्भीर आपदा आती है, जिसके कारण बहुत बड़ा क्षेत्र जलमग्न हो जाता है। कई बार मानवजनित आपदाएं जैसे आग लग जाना, बिजली का करंट लगना, कमजोर भवन के गिर जाने आदि से भी भारी क्षति होती है। इस प्रकार देखें तो आपदाओं को दो मुख्य कोटियों में वर्गीकृत किया जाता है–प्राकृतिक एवं मानवजनित। दोनों ही प्रकार के आपदाओं से धन–संपत्ति, जनजीवन, वातावरण तबाह और बर्बाद होते हैं। प्राकृतिक आपदाएं हैं –भूकंप, सुनामी, ज्वालामुखी, बाढ़, अकाल, दुर्भिक्ष तथा भूस्खलन इत्यादि। वहीं दूसरी ओर मानवजनित आपदाओं के अंतर्गत औद्योगिक दुर्घटनाएं, रेल या सड़क दुर्घटना, बांध का टूटना, जहरीली गैस का रिसाव, युद्ध तथा आगजनी इत्यादि दुर्घटनाएं आती हैं।

इन सभी आपदाओं का असर बहुत बड़ी आबादी पर पड़ता है। लेकिन, इनके प्रभावों के बारे में अध्ययन से यह पता चलता है कि आपदाओं के कारकों के स्थान पर आपदाओं के प्रति असुरक्षात्मक तरीका अपनाने के कारण अधिक क्षति होती है। अतः यह आवश्यक है कि आपदाओं के प्रबंधन को लेकर गम्भीर दृष्टिकोण अपनाया जाए और इसके प्रति सुरक्षा शिक्षा को प्रोत्साहित किया जाए। इसके लिए विद्यालय एक महत्वपूर्ण स्थान है जहां आपदा के प्रति सुरक्षा की विशेष तैयारी होनी चाहिए ताकि समुदाय के लिए वह आदर्श का काम कर सके। इसके साथ ही, विद्यालय के शिक्षकों, बच्चों तथा अन्य कर्मियों का आपदा से सुरक्षा के दृष्टिकोण से भी आपदा प्रबंधन को समझना जरूरी है।

अगर हम परिस्थितिजन्य या प्राकृतिक आपदाओं से सुरक्षा के जरूरी उपाय कर लेंगे तो हमारे जान–माल का न्यूनतम नुकसान होगा। स्कूली शिक्षा के क्रम में ही इन आपदाओं के कारण, स्वरूप, प्रभाव एवं इससे बचने की जानकारी बेहतर तरीके से दिए जाएं तो भविष्य में आने–वाली चुनौतियों का सामना बच्चे बेहतर तरीके से कर पाएंगे। सुरक्षा की शिक्षा जीवन के हर क्षेत्र के लिए जरुरी है, ताकि बच्चों में इन विषम परिस्थितियों से लड़ने की क्षमता का विकास हो सके और वे शांति एवं समझदारी से काम ले सकें। इसी लिए कहा भी गया है ''आपदा नहीं है भारी, अगर पूरी है तैयारी''।

जब तक लोगों में आपदाओं को जानने समझने की जागरुकता नहीं होगी तब तक इसके प्रभाव को कम नहीं किया जा सकेगा। अतः विद्यालयों में समय–समय पर मॉक ड्रिल करवाते रहना चाहिए तथा उसपे समुदाय के लोगों को भी आमंत्रित किया जाना चाहिए। यदि विद्यालय की बात करें तो इसके निर्माण को आपदाओं से सुरक्षा करने के दृष्टिकोण से बनाया जाना चाहिए तथा उस संदर्भ में मानकों को ध्यान में रखा जाना चाहिए।

आपदाओं के प्रति बच्चों और समाज को संवेदित करने में एक शिक्षक की विशेष भूमिका है क्योंकि वह अपने शिक्षणशास्त्र में ऐसे कई गतिविधियों के माध्यम से आपदाओं के विषय में बच्चों को समझा सकता है और साथ ही उनसे सुरक्षा के उपायों की चर्चा भी कर सकता है।

विद्यालय में आपदा प्रबंधन के दृष्टिकोण से सुरक्षा शिक्षा के अंतर्गत चार प्रमुख पहलुओं को रेखांकित किया जाना आवश्यक हैं, जिन्हें पी.आर.आर.पी (PRRP) भी कहा जाता है।

1. P-Preparedness (तैयारी)
2. R-Response (अनुक्रिया)
3. R-Recovery (पुनःप्राप्ति, आरोग्यलाभ)
4. P-Prevention (निवारण, रोक)

तैयारी (Preparedness) : आपदा प्रबंधन को लेकर निम्नलिखित तैयारियों में विद्यालय की भूमिका भी होनी चाहिए।

- लोगों में जागरुकता फैलाना और सम सामयिक आपदाओं के बारे में शिक्षित करना।
- आपदा से बचाव के उपायों को भी विद्यालय में करना तथा समुदाय को इसके प्रति सजग बनाना।
- आपदा प्रबंधन की योजनाओं की अच्छी तरह तैयारी करना और इसमें पूरे समाज को अंगीभूत करना
- आपदाओं के बारे में नाटकीय अभ्यास तथा प्रशिक्षण कार्यक्रम के जरिए मानव शक्ति के कार्यकुशलता को बढ़ाना।
- भौतिक और मानवीय संसाधनों की सूची तैयार करना जो आपदा के समय काम आएं।
- लोगों को व्यक्तिगत रुप से आर्थिक मदद करने के लिए जागरुक और प्रोत्साहित करना।

अनुक्रिया या मदद (Response & relief) : आपदा के घटित होने के पहले, आपदा के दरम्यान या आपदा के घटित होने के बाद के सुरक्षात्मक उपायों को अनुक्रिया या मदद कहते हैं।

- एक नियंत्रण कक्ष हमेशा तैयार रहना चाहिए जो आपदा से प्रभावित अपरिपक्व लोगों को बर्बादी को कम करने के उपायों और रोकथाम की जानकारी और सूचना दे।
- घायलों के उपचार के लिए प्राथमिक स्वास्थय केंद्र और चिकित्सीय व्यवस्था करना ।
- भोजन, जल और चिकित्सीय उपकरणों के साथ प्रशिक्षित लोगों की कई टीम बनाकर प्रभावित क्षेत्रों में भेजना।

- गृहविहीन हो चुके प्रभावित लोगों के लिए तत्काल सुरक्षित स्थान तथा आश्रय की व्यवस्था करना।
- खोए हुए प्रभावित लोगों, जानवरों तथा अन्य संबंधित चीजों की खोज के लिए खोजी एवं बचाव दल का गठन करना एवं उसमें प्रशिक्षित लोगों को शामिल करना जो इस कार्य को संयम तथा ईमानदारी से कर सकें।

पुनर्वासन (Recovery or Rehabilitation) : आपदा से प्रभावित लोगों को फिर से उचित स्थान पर ठहराने की व्यवस्था ही पुनर्वासन कही जाती है। इसके अंतर्गत और भी बातें आती हैं जो निम्नांकित है

- प्रभावित लोगों में संक्रमित बीमारियों के फैलने, अस्वस्थ लोगों के उपचार, बीमारियों के रोकथाम के उपायों और प्राथमिक उपचार के लिए लोगों
- प्रभावित लोगों में परामर्श द्वारा भावनात्मक बातों से प्रभावित करके उनके मनोबल को बढ़ाना जिससे इस आपदा की घड़ी में वे अपना हिम्मत नहीं हारे।
- घरों के मरम्मत होने तक अस्थायी घरों का निर्माण करना जिससे बेघर हुए लोगों को अस्थाई रुप से छत मिल सके।
- आपदा के बाद कूड़े–कचड़े और मलबे से उपयोगी वस्तुओं को छाँटकर अलग करना और उसे पुनः उपयोग में लाने योग्य बनाना।
- प्रभावित लोगों को वित्तीय सहायता प्रदान करना, जिससे उन्हें आर्थिक संकटों से उबारा जा सके। अस्थायी रोजगार की व्यवस्था करना।
- मलबे से छाँटे गए वस्तु को स्थानीय एवं नए संसाधनों के साथ मिला–जुलाकर घर एवं भवनों का पुनर्निर्मान करना।

निवारण (Prevention) : यह पहलू आपदा के रोकथाम के लिए पहले से ली जानेवाली उपाय हैं जिसके द्वारा आपदा के प्रभाव का निवारण किया जा सकता है।

- खतरा प्रभावित क्षेत्र से आबादी को दूर बसाया जाना चाहिए जिससे जान–माल का कम–से–कम नुकसान हो।
- भवनों का निर्माण आपदारोधी उपायों को ध्यान में रखकर करना चाहिए।
- सामुदायिक जागरुकता लाकर आपदा के कारण, निवारण एवं बचाव के उपाय के बारे में समाज के लोगों को शिक्षित किया जाना चाहिए।

इस प्रकार अगर हम उपरोक्त उपायों को अमल में लायेगें तो आपदा के समय होनवाली दुष्प्रभावों से बच सकते हैं, हमारा नुकसान कम हो सकता है तथा हम इन विषम परिस्थितियों का डटकर मुकाबला कर सकते हैं। इसके महत्व को देखते हुए आपदा प्रबंधन को विद्यालयी पाठ्यचर्या में भी शामिल किया गया है ताकि बच्चों में उनके प्रति सुरक्षात्मक समझ विकसित हो सके। शिक्षकों को भी इस विषय में तैयारी करनी होगी ताकि वे बेहतर तरीके से आपदा प्रबंधन को विद्यालय प्रबंधन का हिस्सा बना सके।

गतिविधि

- अभी हाल ही में जब भुकम्प आया तो आपने इससे बचने के लिए विद्यालय में क्या–क्या उपाय किए।
- अपने विद्यालय के भवन की मजबूती की समीक्षा करते हुए यह वर्णन करें कि आपदाओं से सुरक्षा करने के लिए उसमें कौन–कौन से प्रबंध किए गए हैं?
- आपदाओं के विषय में बच्चों की समझ का अध्ययन करें और कुछ ऐसे शिक्षणविधियों को विकसित करें जिनसे उन्हें आपदा प्रबंधन के विषय में आसानी से समझाया जा सके।

1.9 समेकन

इस इकाई में आपने विद्यालय प्रबंधन की आवश्यकताओं को समझा। इसके अंतर्गत आपने जाना कि विद्यालय प्रबंधन की आवश्यकता इसलिए है ताकि विद्यालय के हर आयाम पर ध्यान दिया जा सके तथा उसका सर्वोतम प्रयाग हो सके। साथ ही, विद्यालय और समुदाय के मध्य सम्बंधों को प्रगाढ़ बनाने में भी विद्यालय प्रबंधन की विशेष भूमिका से भी आप अवगत हुए। इसके साथ ही, विद्यालय प्रबंधन की अवधारणा को भी आपने समझा जिसके अंतर्गत उसके विभिन्न तत्वों की चर्चा की गई। आपने यहां जाना कि विद्यालय प्रबंधन में विद्यार्थियों तथा समुदाय की भी विशेष भूमिका होती है। इसके साथ ही यह विश्लेषित किया कि किस प्रकार प्रधान–शिक्षक और अन्य शिक्षक एक इकाई के रूप में प्रबंधन के कार्यों को करते हैं। आपने विद्यालय प्रबंधन के अंतर्गत समय प्रबंधन की भी समझ बनायी और अंत में आपदा प्रबंधन के विविध पक्षों से भी अवगत हुए। इस इकाई में जिन बिन्दुओं पर परिचयात्मक चर्चा की गई है, उसके पीछे यह उद्देश्य रहा है कि आप अपने विद्यालय में उनकी समझ को व्यापक बनाते रहेंगे।

1.10 मूल्यांकन के लिए प्रश्न

1. विद्यालय प्रबंधन की अवधारणा को इसकी आवश्यकताओं का उल्लेख करते हुए स्पष्ट करें।
2. क्या सभी विद्यालयों में एक जैसा विद्यालय प्रबंधन होना चाहिए, तर्क सहित अपनी राय दें।
3. विद्यालय प्रबंधन की संरचना के विभिन्न तत्वों का वर्णन करें।
4. विद्यालय प्रबंधन में समुदाय की भूमिका को कैसे बढ़ाया जा सकता है?
5. विद्यालय में समय का प्रबंधन किस–किस तरह से किया जाना चाहिए? उससे क्या लाभ होगा?
6. समय–सारणी को निर्मित करते समय किन बातों का ध्यान रखना जरूरी है?
7. विद्यालय में आपदा प्रबंधन एवं सुरक्षा शिक्षा की अवधारणा पर जोर देने की क्यों जरूरत है।

इकाई–2
विद्यालय में परिवर्त्तन

2.1 परिचय
2.2 सीखने के उद्देश्य
2.3 पूर्व अनुभव
2.4 शिक्षा का अधिकार और विद्यालयी व्यवस्था में परिवर्तन
    2.4.1 शिक्षा का अधिकार अधिनियम 2009 : प्रमुख बिन्दु
    2.4.2 शिक्षा के अधिकार की वजह से शैक्षिक व्यवस्था में आनेवाले परिवर्त्तन
2.5 समावेशी शिक्षा के अनुरुप विद्यालय संगठन व प्रबंधन
    2.5.1 समावेशी शिक्षा की अवधारणा
    2.5.2 समावेशी शिक्षा और शैक्षिक व्यवस्था में बदलाव
2.6 सूचना व संचार तकनीकी का शिक्षण प्रक्रिया में प्रयोग
2.7 विद्यालय भवन का सृजनात्मक प्रयोग : सीखने–सीखाने के माध्यम के रुप में
2.8 समेकन
2.9 मूल्यांकन के लिए प्रश्न

2.1 परिचय

समय के साथ–साथ, विद्यालयों के स्वरूप पर कई शैक्षिक परिवर्तनों का प्रभाव पड़ता रहा है। जैसे शिक्षा का अधिकार अधिनियम–2009 भारत में शिक्षा के फैलाव की यात्रा में एक महत्वपूर्ण कदम रहा है। इसके लक्ष्य को हासिल करने के लिए विद्यालय की व्यवस्था में कई तरह के बदलाव अपेक्षित हैं। ये बदलाव विद्यालय की भौतिक संरचना से लेकर विद्यालय के प्रशासनिक ढांचे तक के सभी आयामों से संबंधित है, जिसमें शिक्षकों के शिक्षण शैली, विद्यालय प्रबंधन, अभिभावकों की भूमिका, आदि में भी बदलाव शामिल है। इसके साथ ही, समावेशी शिक्षा जैसी अवधारणा ने भी विद्यालय में कई महत्वपूर्ण परिवर्तन किए हैं। बदलती शिक्षा के स्वरूप पर नवाचारी सूचना प्रौ़द्योगिकी के प्रभावों को भी अब नीतियों के माध्यम से प्रोत्साहित किया जा रहा है। इसके साथ ही, सीखने–सिखाने के माध्यम के रूप में विद्यालय भवन को भी कई तरह से बनाया जा रहा है। ये सारे परिवर्तन अभी हाल के हैं और इनका विद्यालयों के समकालीन स्वरूप को गढ़ने में प्रभावी भूमिका है। अतः इनकी समझ शिक्षकों को अवश्य होनी चाहिए। इस इकाई के पहले भाग में शिक्षा के अधिकार अधिनियम और उसका विद्यालय पर पड़नेवाले प्रभावों की चर्चा की गई है। उसके बाद समावेशी शिक्षा की अवधारणा को विद्यालय के साथ जोड़कर समझाया गया है। आगे के भाग में सूचना एवं प्रौद्यागिकी के माध्यम से शैक्षिक परिवर्तनों तथा विद्यालय के सृजनात्मक प्रयोगों की चर्चा की गई है।

2.2 सीखने के उद्देश्य

- विद्यालयों में हो रहे परिवर्तनों से अवगत होना तथा उनकी समीक्षायी समझ बनाना।
- शिक्षा के अधिकार अधिनियम के कारण विद्यालय व्यवस्था में आ रहे परिवर्तनों को समझना।
- समावेशी शिक्षा की अवधारणा को समझना तथा इसके कारण विद्यालय में आए परिवर्तनों का विश्लेषण करना।
- सूचना व संचार तकनीकी के कारण शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में होनेवाले बदलावों को समझना।
- विद्यालय भवन का सीखने–सिखाने में सृजनात्मक प्रयोग से अवगत होना।

2.3 पूर्व अनुभव

शिक्षण अधिगम की प्रक्रिया के दौरान अपने देखा होगा कि बहुत से बच्चे विद्यालयों में प्रवेश प्राप्त नहीं कर पाते और कई बच्चे घरेलू तथा विद्यालयी कारणों की वजह से पढ़ाई बीच में छोड़ जाते है। अतः सभी बच्चों की शिक्षा को अनिवार्य बनाने के दृष्टिकोण से शिक्षा का अधिकार अधिनियम 2009 आया। यह अधिकार तब नहीं था जब आप विद्यालय में अध्ययन कर रहे थे। समावेशी शिक्षा की अवधारणा से आप कुछ हद तक अवगत होंगे। सूचना एवं संचार के तकनीकों का प्रयोग आप अपने व्यक्तिगत जीवन में अवश्य है। लेकिन, यह सम्भव है कि इनका शैक्षिक प्रयोगों आपने नहीं किया हो। विद्यालय भवन के सृजनात्मक प्रयोग भी आपके लिए एक नया अनुभव हो सकता है।

2.4 शिक्षा का अधिकार और विद्यालय में परिवर्तन

शिक्षा का अधिकार कानून 2009 में पारित हुआ जिसे 1 अपैल 2010 से लागू किया गया। इस अधिकार के आने के पीछे एक लम्बा इतिहास रहा है। औपनिवेशिक काल में 1910 के गोखले बिल से लेकर देश आजाद होने पर भारतीय संविधान सभा में भी शिक्षा के मुद्दे पर काफी बहस हुई। शिक्षा को संविधान के किस भाग में रखा जाए, इसको लेकर दो प्रमुख मत थे। पहला मत यह था कि शिक्षा के अधिकार को भारतीय संविधान के तीसरे भाग में दिये गये मूल अधिकारों में शामिल किया जाना चाहिए। इसके विपरीत बहुत से सदस्यों को यह विचार व्यवहारिक नहीं लग रहा था। अतः दूसरा मत यह था कि शिक्षा के विषय को भारतीय संविधान के चौथे भाग में राज्य के नीति निर्देशक सिद्धांतो के अंतर्गत अनुच्छेद 45 के तहत शामिल किया जाए, जिसे अंततः मान लिया गया। अनुच्छेद 45 में कहा गया है कि राज्य यह प्रयत्न करेगा की संविधान के लागू होने के 10 वर्ष के भीतर 14 वर्ष तक के सभी बच्चों को निशुल्क एवं अनिवार्य बुनियादी शिक्षा प्रदान की जाय। इसके मायने यह थे कि 10 वर्ष के भीतर 0 से 14 तक के बच्चों की शिक्षा की समुचित व्यवस्था पूरे देश में केन्द्र तथा राज्य सरकारों द्वारा कर ली जानी चाहिए। यह एकमात्र ऐसा नीतिनिर्देशक सिद्धांत था जिसके लिए समय सीमा निर्धारित की गयी थी। जिससे यह प्रतीत होता है कि संविधान सभा शिक्षा के अधिकार के प्रति काफी गंभीर थी।

गतिविधि

- यदि 1950 से ही शिक्षा के अधिकार को मूल अधिकारों में शामिल किया जाता तो उससे शिक्षा व्यवस्था में क्या–क्या बदलाव हो सकते थे? अध्ययन केन्द्र पर चर्चा करें।
- शिक्षा के अधिकार को राज्य के नीति निर्देशक सिद्धांतो में ही क्यों रखा गया होगा ? क्या आप इसके तर्कों से सहमत है? इस विषय में अपने विद्यालय के सह–शिक्षकों से चर्चा करें।

चूंकि शिक्षा को नीति निर्देशक तत्वों के अंतर्गत रखने के कारण, शिक्षा से जुड़ी व्यवस्था को लागू करना केन्द्र या राज्य सरकारों की अनिवार्य जिम्मेदारी नहीं थी इसलिए सरकारों ने विभिन्न कारणों के चलते इसके निर्धारित लक्ष्य को हासिल करने के लिए अपेक्षित ध्यान नहीं दिया।

इस संदर्भ में 1993 में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा उन्नीकृष्णन् बनाम आंध्र प्रदेश सरकार के मुकदमे में दिये गये निर्णय से महत्वपूर्ण मोड़ आया। इस मुकदमें में शिक्षा के अधिकार की व्याख्या के अनुसार, संविधान के चौथे भाग में दिये गये अनुच्छेद 45 को संविधान के तीसरे भाग में दिए गये मूल अधिकारों के तहत अनुच्छेद 21 में दी गयी जीवन जीने की स्वतंत्रता के साथ जोड़कर सकारात्मक रुप से देखा जाना चाहिए क्योंकि ज्ञान हासिल करने के अवसरों के अभाव में जीवन जीने की स्वतंत्रता निरर्थक है। अतः हम ज्ञान के बिना जीवन को पूरी स्वतंत्रता के साथ नहीं जी सकते। इस तरह सर्वोच्च न्यायालय ने उक्त निर्णय में 0 से 14 वर्ष की आयु तक के बच्चों के लिए निशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा को मुल अधिकार का दर्जा दे दिया। लेकिन इसे वास्तव में मूल अधिकार बनाने हेतु संसद द्वारा कानून पारित करने की आवश्यकता थी। तत्पश्चात, सन् 2002 में संविधान की 86वें संशोधन विधेयक को पारित किया गया। इस विधेयक के द्वारा संविधान के अनुच्छेद 21 जो कि जीवन जीने की स्वतंत्रता से संबधित है, में अनुच्छेद 21(A) जोड़ा गया, जिसमें कहा गया है कि राज्य 6 से 14 वर्ष तक के आयु के सभी बच्चे को निशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा प्रदान करेगी। इस संशोधन के पारित होने के बाद भी सरकार को शिक्षा का मूल अधिकार का विधेयक बनाने में लगभग 8 वर्ष लग गये तथा इसके प्रमुख प्रावधान 2009 तक ही बन पाये। इसके प्रमुख बिन्दुओं को अगले खण्ड में दिया जा रहा है।

2.4.1 शिक्षा का अधिकार अधिनियम 2009 : प्रमुख बिन्दु

शिक्षा के अधिकार को मूल अधिकार बनाने के मायने यह है कि यदि केन्द्र सरकार या कोई राज्य सरकार इस अधिकार के पूरी तरह लागू होने के बाद इसे कार्यान्वयन करने में किसी भी तरह से असफल रहती है तो लोग ऐसे सरकार के विरुद्ध भारत के किसी भी राज्य के उच्च न्यायालय या भारत के सर्वोच्च न्यायालय में सीधे मुकदमा दायर कर सकते हैं। इसके कारण, संबंधित न्यायालय सरकार को शिक्षा के अधिकार को सही ढंग से लागू करने के लिए निर्देश दे सकता है। अर्थात शिक्षा का अधिकार अब कानूनी अधिकार है।

शिक्षा के अधिकार का व्यापक उद्देश्य सभी बच्चों को सार्वभौमिक ढंग से प्रारंभिक शिक्षा प्रदान करना है। शिक्षा के अधिकार को वास्तव में लागू करने के लिये संसद द्वारा जो अधिनियम बनाया गया उसके मुख्य प्रावधान निम्न हैं :

- 6 से 14 वर्ष की आयुवाले सभी बच्चों को निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा प्रदान करना केन्द्र तथा राज्य सरकारों की जिम्मेदारी होगी।
- हरेक आवासीय क्षेत्र के 1 कि०मी० दायरे में कक्षा 5 तक का प्राथमिक विद्यालय होगा।

- हरेक आवासीय क्षेत्र के 3 कि०मी० दायरे में एक कक्षा 8 तक का माध्यमिक विद्यालय होगा, ताकि बच्चों को शिक्षा प्राप्त करने के लिए घर से बहुत दूर न जाना पड़े। यह प्रावधान इस तथ्य को ध्यान में रखते हुये शामिल किये गये हैं कि देश के विभिन्न राज्यों में बहुत से बच्चे विशेष रुप से लड़कियाँ विद्यालय के घर से दूर होने की वजह से पढ़ाई छोड़ देती हैं।
- प्रारंभिक शिक्षा यानि कक्षा 8 तक के वर्गों की पढ़ाई या 14 वर्ष की आयु पूरी होने तक किसी भी बच्चे को किसी भी कक्षा में असफल घोषित नहीं किया जा सकता । ऐसा इसलिए किया गया है ताकि बच्चों पर पढ़ाई और परीक्षा का अतिरिक्त मानसिक दबाव ना पड़े तथा वे स्वतंत्रतापूर्वक जीवन के सभी क्षेत्र में सीखने की कोशिश करे।
- किसी भी बालक या बालिका को उसकी आयु के अनुसार कक्षा/वर्ग में प्रवेश प्रदान करने से कोई भी विद्यालय इंकार नहीं करेगा। उदाहरण के लिये अगर किसी बालक/बालिका की आयु 12 वर्ष है तो उसे कक्षा 6 में प्रवेश देना होगा। विद्यालय के अध्यापकों व प्रबंधन से यह अपेक्षा की जाती है कि वे ऐसे बच्चों को उनकी आयु के समकक्ष कक्षा/वर्ग से पहले की कक्षाओं की तैयारी करवाये तथा संबधित कक्षा/वर्ग के लायक बनाये। इस प्रावधान के पक्ष में यह तर्क दिया जाता है कि जिन बच्चों को इस अधिकार के पहले शिक्षा प्राप्त करने के समुचित अवसर नहीं मिले वे शिक्षा प्राप्ति के अवसरों से वंचित नहीं रहे तथा आयु अधिक हो जाने की वजह से पिछड़े भी नहीं।
- कुछ प्रावधानों के द्वारा धार्मिक और भाषाई आधार पर निजी समूह द्वारा चलाये जा रहे अल्पसंख्यकों के निजी विद्यालयों के अलावा हर तरह के निजी विद्यालयों एवं केन्द्र सरकार व उसके प्रतिष्ठानों द्वारा चलाये जा रहे विद्यालयों जैसे केन्द्रीय विद्यालयों, नवोद्य विद्यालयों, सैनिक स्कूलों आदि में 25 प्रतिशत सीटें वंचित तथा आर्थिक दृष्टि से कमजोर वर्ग के बच्चों के लिए आरक्षित की जायेंगी। जब तक 25 प्रतिशत सीटें गरीब तबकों के बच्चों से भरी नहीं जाती तब तक कोई विद्यालय ऐसे बच्चों को प्रवेश देने से इंकार नहीं कर सकता।
- जिन बच्चों को निजी एवं उच्चस्तरीय माने जाने वाले सरकारी विद्यालयों में आरक्षण के आधार पर प्रवेश दिया जायेगा उन बच्चे के हिस्से की फीस को उस राज्य की सरकार या केन्द्र सरकार द्वारा विद्यालय को विद्यालय में होनेवाले प्रति विद्यार्थी कुल खर्च की दर से दिया जायेगा।
- विभिन्न विद्यालय में प्रवेश देते समय विद्यार्थी तथा अभिभावकों के साथ साक्षात्कार नहीं किये जायेगें। और ना ही आरक्षित कोटे में आनेवाले विद्यार्थीओं से कैपिटेशन फीस (दानशुल्क) लिया जा सकता है।

हालांकि शिक्षा के अधिकार अधिनियम से यह अपेक्षा की जाती है कि इसमें समान स्कूल प्रणाली को विकसित करने के लक्ष्य को हासिल करने के लिये महत्वपूर्ण कदम उठाये जायेगें। लेकिन विभिन्न राजनैतिक, आर्थिक तथा सामाजिक कारणों के चलते ऐसा नहीं हुआ। उपरोक्त प्रावधानों के द्वारा अधिनियम में यह प्रयास किया गया है कि समाजिक न्याय तथा सामाजिक समानता की तरफ एक कदम बढ़ाया जाय। इसकी वजह से विद्यालयों पर कई प्रकार के प्रभावों को देखा जा सकता है जिनकी चर्चा अगले खण्ड में की जा रही है।

गतिविधि

शक्षा के अधिकार अधिनियम की कॉपी इंटरनेट पर उपलब्ध है। प्रशिक्षु उसे डाउनलोड करके प्रिंट करा लें। साधनसेवी यह अवश्य सुनिश्चित करें कि सभी के पास इस अधिनियम की प्रति हो।

शिक्षा के अधिकार अधिनियम की मौलिक प्रति को पढ़े और उनमें से कोई दस बिन्दु चुनकर निम्नलिखित सारणी में लिखें। इसके साथ ही, उन बिन्दुओं के विषय में समुदाय की क्या जानकारी है, इसका विश्लेषण करें।

	शिक्षा का अधिकार अधिनियम 2009 के चयनित बिन्दु	**समुदाय की जानकारी**
1		
2		
3		
4		
5		
6		
7		
8		
9		
10		

2.4.2 शिक्षा के अधिकार की वजह से शैक्षिक व्यवस्था में आनेवाले परिवर्त्तन

शिक्षा के अधिकार अधिनियम के लागू होने से शैक्षिक व्यवस्था में कई परिवर्तन आने शुरू हुए हैं। जैसे–विद्यालय की भौतिक संरचना में परिवर्त्तन तथा विद्यालयों की संख्या में स्वतः ही वृद्धि हुई है। जिन क्षेत्रों में 1 कि०मी० की आवासीय दायरे में विद्यालय नहीं है सरकारों को वहाँ विद्यालय का निर्माण करने की बाध्यता हो गई है। इसी तरह वर्ग 8 तक के विद्यालयों को भी बनवाना सरकार के लिए अनिवार्य हो गया। साथ ही, विद्यालयों का निर्माण करवाते समय कई नए मानकों को भी ध्यान रखना अनिवार्य हो गया है। शिक्षा का अधिकार कानून के प्रावधान के कारण, विद्यालय की भौगोलिक संरचना एवं विस्तार में कई परिवर्तनों की शुरूआत हुई जो इस प्रकार से हैं :

- हरेक छात्र के 1 कि०मी० के आवासीय दायरे में एक प्राथमिक विद्यालय होगा ताकि प्रत्येक छात्र/छात्रा का स्कूल जाना सुनिश्चित हो सके। इस तरह प्रत्येक 3 कि०मी० के आवासीय दायरे में वर्ग 8 तक का बुनियादी या माध्यमिक स्तर का विद्यालय खोला जाना भी अनिवार्य हो गया है।
- इसके साथ ही, छात्र/छात्राओं के लिए अलग–अलग शौचालयों की व्यवस्था पर जोर दिया जा रहा है ताकि छात्राओं के विद्यालय छोड़ने की प्रवृति कम हो सके।
- विद्यालय भवन में बच्चों की सुरक्षा के लिए चहारदीवारी का निर्माण होना भी जरूरी हो गया है।
- विद्यालय भवन में कक्षाकक्ष के साथ–साथ खेल के मैदान के होने पर भी जोर दिया गया है।
- इस अधिनियम के तहत यह प्रावधान भी किया गया है कि शिक्षिका छात्र अनुपात 30/1 होना चाहिए। यदि किसी विद्यालय की किसी कक्षा में 30 से अधिक छात्र/छात्रायें हैं तो वहाँ कक्षा का दूसरा वर्ग/सेक्शन बनाना चाहिए। उक्त प्रावधान का लक्ष्य बच्चों को अंतर संवादात्मक तथा गतिविधि आधारित शिक्षण को सुनिश्चित बनाना है।

उपरोक्त प्रावधानों के अलावा अधिनियम में विद्यालय प्रबंधन की भूमिका तथा विद्यालय प्रबंधन में विभिन्न बदलावों का उल्लेख भी किया है। कुल मिलाकर देखें तो शिक्षा का अधिकार अधिनियम 6 से 14 वर्ष की बच्चे को सार्वभौमिक शिक्षा प्राप्त कराने के अवसर की ओर एक कदम है। इसकी सफलता इस बात पर भी निर्भर करती है कि विद्यालय और अध्यापक इसके प्रति कितने संवेदनशील एवं तैयारी के साथ हैं। शिक्षा का अधिकार का उद्देश्य केवल विद्यालय को हर बच्चे की पहुंच में लाने भर तक नहीं है बल्कि इसने तो पाठ्यचर्या, शिक्षकों के शिक्षण एवं मूल्यांकन व्यवस्था को भी गहराई से प्रभावित किया। इसके तहत शिक्षकों को अपनी नियमितता के साथ–साथ निश्चित समय में पाठ्यक्रम को पूर्ण करने की अपेक्षा भी है। सभी बच्चों के अधिगम योग्यता का आकलन सतत् करते रहना होगा और उनकी आवश्यकतानुसार पूरक निर्देश भी देना होगा। छात्रों को माता–पिता के साथ नियमित बैठक कर छात्रों के व्यवहार, अधिगम योग्यता प्रगति आदि की जानकारी देते रहना भी होगा। अतः शिक्षण की भूमिका में व्यापक बदलाव अपेक्षित है। इस प्रकार यह पाते हैं कि शिक्षा के अधिकार अधिनियम ने शैक्षिक व्यवस्था में कई परिवर्तनों की शुरूआत की। उन परिवर्तनों का प्रभाव विद्यालय के साथ–साथ शिक्षकों पर भी पड़ा है। उदाहरण के तौर पर, अब उनसे कक्षा में ऐसे शिक्षण की अपेक्षा की जाती है जिसमें कक्षा के सभी बच्चों का खयाल रखा जाए तथा यह सुनिश्चित किया जा सके कि वे सीख रहे हैं।

शिक्षा के अधिकार के तहत विद्यालय प्रबंधन समिति की विशेष भूमिका निश्चित की गई है। यह समिति विद्यालय के दिन–प्रतिदिन के सुचारु संचालन से लेकर विद्यालय के लिये कार्ययोजना तथा बजट आदि बनाने जैसे कामों में सक्रिय रुप से शामिल होगें।

शिक्षा के अधिकार कानून में विद्यालय प्रबंधन समिति का गठन व दायित्व

1. शिक्षा के अधिकार कानून के तहत गैर अनुदानित विद्यालयों के अतिरिक्त प्रत्येक विद्यालय में प्रबंधन समिति होगी एवं प्रत्येक शैक्षिक सत्र के आरंभ में इसका पुनर्गठन किया जाएगा।
2. विद्यालय प्रबंधन समिति में 16 सदस्य होगें, जिसमें 12 सदस्य बच्चों के माता–पिता, 2 सदस्य शिक्षक, 1 सदस्य पंचायत प्रतिनिधि एवं 1 सदस्य शाला का बच्चा और स्थानीय शिक्षाविद् होगा तथा समिति में 50 प्रतिशत महिला सदस्य यानि कि 8 सदस्य महिलाएँ होंगी।
3. समिति में गाँव में निवासरत अनुसूचित जाति, अनु० जन जाति, पिछड़ा वर्ग, अल्पसंख्यक, कमजोर वर्ग के लोगों का समुचित रुप से प्रतिनिधित्व होगा।
4. समिति में बच्चों के माता–पिता सदस्यों में से अध्यक्ष एवं उपाध्यक्ष का चयन किया जाएगा।

शिक्षा के अधिकार ने शिक्षा के सार्वभौमीकरण के लिए स्थानीय प्रशासनिक संस्थाओं को भी महत्वपूर्ण भूमिका सौंपी है, जिसमें उनके क्षेत्राधिकार में रहने वाले 14 वर्ष तक के सभी बच्चों के अभिलेख व्यवस्थित करना, प्रयासी बच्चों सहित सभी बच्चों के नामांकन सुनिश्चित करना, किसी भी बच्चे के विरुद्ध भेदभाव न किए जाने को सुनिश्चित करना आदि आते हैं।

इस अधिनियम की कई आधारों पर व्यापक आलोचना होती है उदाहरण के लिये अधिनियम में समान स्कूल प्रणाली को विकसित करने का प्रयास नहीं किया गया, ना ही 0 से 6 वर्ष तथा 14 से 18 वर्ष की आयुवाले बच्चों को निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा के दायरे में लाया गया है।

गतिविधि

- अपने विद्यालय के आस–पास के समुदाय का भ्रमण करें और शिक्षा के अधिकार के संदर्भ में यह पता लगाएं कि उन्हें इसके बारे में क्या जानकारी है? इसके आधार पर एक प्रतिवेदन तैयार करें।
- क्या शिक्षा के अधिकार के आने से आपके क्षेत्र में कोई परिवर्तन आया है? इसकी समीक्षा करें।
- शिक्षा के अधिकार में किन प्रावधानों को शामिल करने की अपेक्षा है? अपने अध्ययन केन्द्र पर चर्चा करें।
- शिक्षा के अधिकार के आ जाने से एक अध्यापक के रूप में आपकी भूमिका में क्या परिवर्तन आए हैं? इसकी समीक्षा करें। इसके लिए पहले के शिक्षकों से साक्षात्कार करें।

2.5 समावेशी शिक्षा के अनुरुप विद्यालय संगठन व प्रबंधन

समाज में ऐसे बच्चों को निःशक्त (disabled) कहा जाता रहा है जिनमें किसी प्रकार की शारीरिक अपंगता रही है। शुरूआत में इन बच्चों के प्रति समाज का दृष्टिकोण बहुत सकारात्मक या मित्रवत नहीं रहा है। लेकिन, सामाजिक सोंच में परिवर्तन का यह परिणाम है कि आज समावेशी शिक्षा की अवधारणा पर जोर दिया जा रहा है तथा इन बच्चों को विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के रूप में सम्बोधित किया जा रहा है। आज के समय में समावेशी शिक्षा एक वृहत अवधारणा बन चुकी है जिसमें सिर्फ विशेष आवश्यकता वाले बच्चे ही नहीं बल्कि उपेक्षित वर्गों के बच्चों को भी शामिल किया जा रहा है।

हालांकि, विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के लिए विशिष्ट विद्यालयों का प्रावधान रहा है। लेकिन यह पाया गया कि इनमें पढ़ने की वजह से ये बच्चे स्वयं को सामान्य बच्चों से अलग समझने लगते हैं और ये सही तरीके से समाज में स्वयं को समायोजित नहीं कर पाते। वहीं समावेशी शिक्षा में सामान्य बच्चों के साथ शिक्षण में सहभागी होने से ये स्वयं को अलग नहीं समझते तथा सभी बच्चों के साथ समान भागीदारी निभाते है। समावेशी शिक्षा वर्तमान समाज एक अनिवार्य आवश्यकता बन गयी है। समावेशी शिक्षा वैयक्तिगत, पारिवारिक, सामाजिक एवं राष्ट्रीय दृष्टि से बहुत आवश्यक है। यह विभिनन प्रकार के भेदभावों और असमानताओं को दूर करने में सहायक सिद्ध हो सकती है।

2.5.1 समावेशी शिक्षा की अवधारणा

समावेशी शिक्षा का आशय वैसी शैक्षिक व्यवस्था से है जहाँ सभी तरह के बच्चों को साथ–साथ पढ़ने का समान अवसर मिल सके। यहाँ विशेष आवश्यकता वालक बच्चे को बदलने के लिए नहीं कहा जाता बल्कि विद्यालय के संपूर्ण परिवेश में उनकी आवश्यकता के अनुसार अपेक्षित बदलाव किये जाते हैं। समावेशी शिक्षा का व्यापक लक्ष्य यह है कि सामान्य बच्चों और विशिष्ट आवश्यकताओं वाले बच्चों में कोई भेदभाव नहीं रहे तथा दोनों विद्यार्थी एक–दूसरे को ठीक ढंग से समझते हुए आपसी सहयोग से पठन–पाठन के कार्य को कर सकें। समावेशी शिक्षा का व्यापक लक्ष्य यह भी प्रतीत होता कि एक साथ शिक्षित होने पर भविष्य में समाज के अंदर विशिष्ट आवश्यकतावाले व्यक्तियों के सरोंकारो को आम लोग बेहतर ढंग से समझ सकें तथा उनमें उनके प्रति अपेक्षित संवेदनशीलता का विकास हो सके।

समावेशी शिक्षा की आवश्यकता सबसे अधिक बच्चों के व्यक्तिगत विकास तथा उनमें अपनी क्षमताओं के बारें में आत्मविश्वास पैदा करने के लिये है। समावेशी शिक्षा बच्चों के व्याक्तिगत गुणों को पहचानकर उन्हें इन गुणों को पूरी तरह से विकासित करने के अवसर देने में विश्वास रखती है। समावेशी शिक्षा बच्चों को एक दूसरे की भिन्न विशेषताओं को समझने तथा उनकी सराहना करने में सहायक होती है। इससे बच्चे एक दूसरे की सहायता करने के प्रति प्रोत्साहित होते है। साथ ही, सामान्य बच्चों को भी विशेष आवश्यकता वाले बच्चो के साथ समायोजित होने के अवसर मिलते है जिनसे उनमें ऐसे बच्चों के बारे में निशक्ता जैसे भ्रम पैदा नहीं हो पाते हैं। समावेशी शिक्षा निशक्त बच्चों के परिवारो के लागों को शिक्षित करने व संवेदनशील बनाने में भी सहायी है।

2.5.2 समावेशी शिक्षा और शैक्षिक व्यवस्था में बदलाव

सार्वभौमिक शिक्षा के लक्ष्य को हासिल करने के लिये समावेशी शिक्षा का प्रसार एक महत्वपूर्ण कदम है। समावेशी शिक्षा प्रदान करने के लिये विद्यालय की भौतिक संरचना तथा विद्यालयों के शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में व्यापक बदलावों की आवश्यकता है। भौतिक संसाधनों के अन्तर्गत, विद्यालय में विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के लिए कुछ ऐसे परिवर्तनों को किया गया है ताकि विद्यालय में वे सहजता से अपने कार्यों को कर सकें। शिक्षण अधिगम प्रणाली में इन बच्चों की आवश्यकतानुसार बदलाव करने पर जोर दिया जा रहा है। शिक्षक का दृष्टिकोण इन विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के प्रति साकारात्मक होना चाहिए। साथ ही, समावेशी कक्षा की प्रक्रियाओं कों प्रभावी ढंग से चलाने के लिये व्यापक बदलाव की आवश्यकता है। इसके लिए, शिक्षकों को विशेष प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए।

लेकिन, समावेशी शिक्षा वांछित परिणाम अभी तक हासिल नही हो पाये है। समावेशी शिक्षा के बारे में अभी भी जागरूकता या संवेदनशीलता अभी भी बहुत कम है। अधिकतर लोग विशेष आवश्यकता वाले बच्चों को अपने परिवारों पर बोझ समझते है और वे उनके पढाई पर विशेष ध्यान नही देने। अधिकांश राज्यों में कोई ऐसा सर्वेक्षण नहीं है जिसे यह पता लग सके की संबंधित राज्यों में किस श्रेणी कितने विशेष आवश्यकता वाले बच्चे हैं। जिन विद्यालयों में समावेशी सिक्षा के अंतर्गत विशेष आवश्यकता वाले बच्चों को प्रवेश दिया गया है उन विद्यालयों में भी भौतिक संसाधनों तथा तकनीकी सुविधाओं का निनांत अभाव है। यदि दृष्टिबाधित विशेष आवश्यकता वाले बच्चों की बात करें तो विद्यालयों में उनकी पढ़ाई के लिये आवश्यक उपकरण जैसे ब्रेल, लिखने वा गणित करने की स्लेटे, ब्रेल में किताबे, सांकेतिक भाषा के उपकरणों आदि का अभाव रहता है।

समावेशी शिक्षा के प्रति बहुत से विद्यालयों मे संकीर्ण सोंच अभी भी कायम है। विशेष आवश्यकता वाले बच्चों की पढ़ाई–लिखाई की विशिष्ट प्रणालियों का प्रशिक्षण सामान्य विद्यालयों के अधिकतर शिक्षकों को नही होता? वे नवीनतम तकनीकी से भी प्रायः अपरिचित होते हैं। इन परिस्थितियों में विशेष आवश्यकता वाले बच्चे विद्यालय जाकर कुछ खास नहीं सीख पाते हैं। समावेशी शिक्षा की यह भी गंभीर सीमा है।

समावेशी कक्षा में शिक्षण अधिगम–संचालन हेतु तकनीकी का अधिक से अधिक उपयोग किया जाना चाहिये। आज–कल कम्प्युटर या तकनीकी आधारित बहुत से उपकरण उपलब्ध हैं जिनसे विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के शिक्षण में मदद मिल सकती है।

आज समावेशी शिक्षा के दायरे में सिर्फ विशेष आवश्यकता वाले बच्चे ही नहीं अपितु वंचित बच्चे भी आने लगे हैं और समावेशी शिक्षा का दायरा बढ़ गया है। इसलिए समुचित विद्यालय प्रबंधन के बिना इन सबको समावेशी शिक्षा प्रदान करना संभव नहीं है। समावेशी शिक्षा प्रदान करने में विद्यालय प्रबंधन की भूमिका महत्वपूर्ण है, क्योंकि यह मुद्दा समाज के व्यापक वर्गों से जुड़ा है, इसलिए विद्यालय प्रबंधन अपनी सामाजिक हैसियत के द्वारा समावेशी शिक्षा के लिए कई तरह से कार्य कर सकता है।

विद्यालय प्रबंधन समाज में विशेष आवश्यकतावाले बच्चों के प्रति संवेदनशील दृष्टिकोण विकसित कर सकता है। ताकि लोग ऐसे बच्चों को सकारात्मक दृष्टि से देखें। विद्यालय प्रबंधन अपने क्षेत्र के लोगों में विशेष आवश्यकता वाले बच्चों को विद्यालयों में दाखिल करवाने के संबंध में जागरुकता पैदा कर सकता है। प्रायः यह देखा जाता है कि जिन परिवारों में विशेष आवश्यकतावाले बच्चे होते हैं, वे कई आशंकाओं के चलते बच्चों को दाखिल नहीं करवाते हैं। अतः विद्यालय प्रबंधन को उन्हें जागरूक करना चाहिए।

गतिविधि अपने तथा आस–पास को मिलाकर कम से कम पांच विद्यालयों का भ्रमण करें तथा उनके शिक्षकों से बातचीत करके यह पता लगाएं कि उन विद्यालयों में समावेशी शिक्षा की क्या स्थिति है। क्या शिक्षकों को विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के बारे में जानकारी है और क्या वे उनकी शिक्षा को लेकर संवेदनशील हैं। इसके साथ ही आप अन्य सम्बंधित जानकारियों को भी एकत्र करें तथा निम्नलिखित सारणियों में लिखें।	
विद्यालय–1	
विद्यालय–2	
विद्यालय–3	
विद्यालय–4	
विद्यालय–5	
आपका विश्लेषण :	

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा–2005 में कहा गया है कि "कभी–कभी बच्चों को अपंग/असमर्थ/निर्योग्य शब्दों से सम्बोधित करते हैं तो उनमें एक प्रकार की कुण्ठा और असहायता की भावना घर कर जाती है। इससे उन कठिनाइयों पर पर्दा पड़ जाता है, जिसका सामना विद्यार्थियों को विविध सामाजिक, सांस्कृतिक वातावरण से आने के कारण या कक्षा में अपर्याप्त शिक्षण विधि अपनाने के कारण करना पड़ता है। इन बच्चों के भी अन्य बच्चों के समान अधिकार होते हैं। विद्यार्थियों के बीच मतभेदों को समस्या के रूप में न देख कर शिक्षण के सहयोगी संसाधन के रूप में देखा जाना चाहिए। शिक्षा में समावेश समाज में समावेश का ही एक घटक है, इसलिए विद्यालय का यह दायित्व बनता है कि वे एक ऐसी उदार पाठ्यचर्या को अपनाएं जो सभी विद्यार्थियों के लिए सुलभ हो। इस पाठ्यचर्या में उचित चुनौती और पर्याप्त अवसर हों ताकि वे अध्ययन में सफलता पा सकें और अपनी सम्भावनाओं का पूर्ण विकास कर सकें।

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा–2005 में इस बात पर भी जोर दिया गया है कि विशेष आवश्यकता वाले बच्चों का पाठ्यक्रम भी सामान्य बच्चें के समान ही हो ताकि उनमें किसी प्रकार की हीनता की भावना न हो। दृष्टिबाधित बच्चें से मौखिक कार्य एवं श्रवण बाधित बच्चें से लिखित कार्य अधिक करवाया जाए। विमंदित बच्चों के लिए बात को बार–बार दोहराया जाए जिससे उनमें आत्मनिर्भरता विकसित हों। अतः विषेश आवश्यकता वाले बच्चों को ऐसा वातावरण प्रदान किया जाना चाहिए जिसमें इनकी सीखने की प्रक्रिया में कम से कम बाधाएं रह जाए तथा वे कक्षा के अन्य बच्चों की भांति ही सीख, समझकर आगे बढ़े और उनका समुचित विकास हो।

इससे सामान्य बच्चों और विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के मध्य सभी स्तरों पर स्वस्थ सामाजिक संबंध विकसित होने के अवसर मिलते हैं। इससे उनका समाज में समायोजन भली प्रकार से हो जाता है। सामाजिक गतिविधियों में सामान्य रूप से भाग लेने का अवसर मिलने से उनमें परस्पर अपरिचित भाव या दूरी घट जाती है। इस वातावरण से विषेश आवश्यकता वाले बच्चों को समान शैक्षिक अवसर मिल जाते हैं। तथा वे समाज के अन्य सदस्यों की तरह जीवन के विविध क्षेत्रों में कार्य करने की योग्यताएं निश्चित कर लेते हैं।

सामान्य अनुभव आधारित तथ्य यह है कि कक्षा में बच्चों के सीखनें सम्बन्धीं योग्यता का स्तर पृथक–पृथक होता हैं। कक्षा में कुछ ऐसे बच्चे भी होते हैं जिन्हें सिखाने के लिए विशेष शिक्षण सामग्री तथा अध्यापकों से विशेष सहायता की आवश्यकता होती हैं। मानसिक योग्यता का निम्न स्तर, विकास में विलम्ब, देखने, सुनने, बोलने में कठिनाई, मांसपेशियों की क्षति, अंग की विकृति आदि कई चुनौतियां भी इन बच्चों में होती है। इन बच्चों के संदर्भ में समावेशी शिक्षा की आवश्यकता को अनुभव किया गया तथा इसे प्रभावी बनाने के लिए उपयुक्त कक्षा व्यवस्था का आकलन व निर्धारण, शिक्षण सहायता सामग्री एवं उचित दृष्टिकोण का विकास करने पर जोर है। इसके अंतर्गत विद्यालय के कार्यों में कई परिवर्तन करने के अपेक्षा है जैसे–विद्यालय में प्रवेश के समय प्रत्येक बच्चे की विशेष आवश्यकताओं की जाँच कर जानकारी प्राप्त की जाए। जानकारी प्राप्त करते समय सम्बन्धित बच्चे को यह अहसास नहीं होना चाहिए कि उसकी अक्षमता को देखा जा रहा है।

इसके साथ ही, दृष्टिदोष एवं श्रवण वांचित बच्चों को अग्रिम पंक्ति में अन्य बच्चों के साथ बिठाया जाना चाहिए ताकि वे श्याम पट्ट पर लिखित बातों को सुगमता से पढ़ सके तथा शिक्षक के निर्देशों का सरलता और सहजता से पालन कर सकें। साथ ही, शिक्षक को त्रिआयामी शिक्षण सामग्री जैसे–मॉडल आदि का शिक्षण में विशेष प्रयोग करना चाहिए जिससे विशेष आवश्यकता वाले बच्चों की समझ विकसित करने में

बहुत मददगार होती हैं। बच्चों को उनकी आवश्यकता के अनुसार अध्ययन सामग्री उपलब्ध करवाना भी आवश्यक हैं। अस्थि दोष वाले बच्चों का बाई साईकिल या व्हील चेयर उपलब्ध करवाई जानी चाहिए, जिससे उनकी गतिशीलता सभंव हो सके। साथ ही, विषय की जानकारी और सीखने में सहायक अनेक प्रकार के उपकरणों की व्यवस्था से पाठ्यक्रम में यथोचित अनुकूलन किया जाना चाहिए।

गतिविधि

- आप अपने विद्यालय में ऐसे बच्चों की पहचान करें जिन्हें विशेष आवश्यकता की अपेक्षा है। साथ ही, उन्हें किस प्रकार के विशेष आवश्यकताएं चाहिए, इसका भी निर्धारण करें।
- अपने समुदाय के कुछ लोगों का साक्षात्कार करें तथा विशेष आवश्यकतावाले बच्चों के विषय में उनकी धारणाओं का पता लगाएं।
- आप विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के दृष्टिकोण से विद्यालय के संसाधन में क्या परिवर्तन करना चाहेंगे। इसकी सूची बनाएं।

2.6 सूचना व संचार तकनीकी का शिक्षण प्रक्रिया में प्रयोग

विद्यालय प्रबंधन समिति में अभिभवकों की बैठक आयोजित की गई है। आरती जी एवं सोहन जी दोनों बैठक में पहली बार आए हैं। आरती जी 10वीं और सोहन जी 12वीं तक शिक्षा प्राप्त की है। उन दोनों के बीच संपन्न हुए वार्त्तलाप को ध्यान से सुनिएः–

अरतीजी :– आज की पुस्तकें कितनी रंगीन हो गयी हैं। चित्रों के माध्यम से बातों को कितनी सरलता से समझाया गया है। हमारे जमाने में पुस्तकें सिर्फ काली स्याही से छपी होती थी।

मनोज जी :– सिर्फ किताबें ही नहीं अन्य मनोरंजक साधनों जैसे कविताओं का मातृभाषाओं में रूपांतरण स्लाईड दिखाकर बच्चों को मनोरंजक तरीके से पढ़ाया जा रहा है।

आरती जी :– आखिर इतनी सुंदर किताबें कौन तैयार करता है?

मनोज जी :– आरती जी, आज सूचना एवं संचार तकनीक के साधनों का उपयोग करके इन पुस्तकों का निर्माण किया जाता है।

उपरोक्त बातों से सूचना एवं तकनीकी के शिक्षा में प्रयोग की कुछ झलक मिलती है। शिक्षा में सूचना एवं संचार तकनीक से अर्थ शैक्षिक क्रियाकापों में तकनीकी उपकरणों के उपयोग से है इसमें दृश्य–श्रव्य सामग्री, कप्यूटर, मीडिया, प्रक्षेपक, स्लाइड, शिक्षण–मशीन, रेडियों, टेप–रिकार्डर, टी.वी. इत्यादि आते हैं।

शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में शैक्षिक तकनीक की महत्वपूर्ण भागीदारी है। इस तकनीक के माध्यम से शिक्षा–कार्यक्रमों को अधिकतम लोंगों तक पहुँचाया जा सकता है। कम्प्यूटर के द्वारा हम किसी भी विषय के संबंध में नई सामग्री विकसित कर सकते है जैसे, चार्ट, डायग्राम, ग्रापेफक्स चित्रा, कार्यशीटें आदि। इसके अलावा कम्प्युटर की सहायता से इंटरनेट की विभिन्न वेवसाइटों से नई जानकारियाँ, मॉडल आदि ढूँढ सकते हैं। शिक्षण अधिगम सामग्री में हमें कई तरह की तथ्यात्मक जानकारियाँ, चाहिए होती हैं? जिन्हें हम आसानी से इंटरनेट पर खोज सकते हैं।

शिक्षक प्रशिक्षण में भी सूचना संचार तकनीकी बहुत महत्वपूर्ण साधन सिद्ध हो सकता है। सूचना एवं संचार तकनीक की सहायता से हम दिए गए विषय से संबंध्ति सामग्रियों को दिखा सकते है, तथा हरेक दृश्य पर सामूहिक चर्चा करवा सकते हैं। इन तकनीकों के द्वारा हम संबंधित विषय से जुड़े चित्र, ग्राफिक्स, स्लाइड, वीडियों, फ्लोर्चाट आदि दिखा सकते हैं तथा जरूरत पड़ने पर श्रत्य सामग्री के अंश भी सुनवा सकते हैं। यह माना गया है कि सुनकर, देखकर या अनुकरण करके सीखना अधिक प्रभावी होता है। इसके अलावा इन संचार साधनों का उपयोग करके हम अपने छात्रों/छात्राओं को समय पर फीड बैक देकर उनका मूल्यांकन कर सकते है। प्रथम सत्र तथा तृतीय सत्र के प्रायोगिक विषयपत्र में आप शिक्षा में सूचना एवं संचार तकनीकी के सम्बंध में पहले ही अध्ययन कर चुके हैं अतः यहां पर इसकी चर्चा संक्षेप में ही की गई है।

सूचना एवं संचार तकनीकी के विभिन्न विशेषताओं के साथ–साथ इसकी आलोचना भी होती रही है। इस सम्बंध में एक मत यह है कि इसकी वजह से बच्चों के हस्तकौशलों हाथों से अलग–अलग तरह की चीजे बनाने जैसे कौशलों से दूर होने जा रहे है। यह सृजनशीलता को समाप्त कर एकतरफा संप्रेषण रह गया है। शिक्षक और विद्यार्थी दोनों ही इसका उपयोग अध्ययन सामग्री इकठ्ठा करने के लिए करने लगे हैं। इसके कारण, शिक्षा परस्पर संवाद और आत्मीयता से दूर होती जा रही है।

गतिविधि

- आप अपने विद्यालय में सूचना एवं संचार तकनीकी के किन उपकरणों का प्रयोग कर सकते हैं, उनकी सूची बनाएं।
- आपके विद्यालय के बच्चे सूचना एवं संचार तकनीकी से कितने प्रभावित हैं, इसका अध्ययन करें।

2.7 विद्यालय भवन और सृजनात्मकता

बच्चों की शिक्षा में विद्यालय का भवन महत्वपूर्ण स्थान रखता है। बच्चे अपने दैनिक जीवन के समय का बड़ा हिस्सा यहीं व्यतीत करते है। इसलिए विद्यालय भवन को सिर्फ एक कंक्रीट की इमारत नहीं समझकर, इसे बच्चों की सृजनशीलता के विकास का स्थान समझना चाहिए। इसलिए विद्यालय भवन की बनावट ऐसी होनी चाहिए जिसके अन्तर्गत बच्चे की कल्पनाशीलता को विस्तार मिल सके और वे नये मौलिक विचार, वस्तु का निर्माण कर सके। इसलिए विद्यालय भवन को एक जीवन्त तत्व के तौर पर देखने की जरूरत है जिससे बच्चे रोजाना अंतक्रिया करते हैं और बहुत कुछ सीखते हैं।

आप सभी शिक्षकों ने अपने शिक्षण के दौरान यह अनुभवन जरूर किया होगा कि बच्चे जो स्वयं करके सीखते है या व्यवहारिक तौर पर समझाने पर सीखते है। वह उनके लिए अधिक बोधगम्य और सरल होता है। इसके लिए आवश्यक है विद्यालय भवन की बनावट में सीखने के ऐसे तत्वों को समाहित किया जाए जिससे बच्चें स्वतः ही सीखने के लिए आकर्षित हों। बच्चे जिन विषयों को पढ़ते हैं उन विषयों की संकल्पनाओं को किताबों के साथ–साथ विद्यालय के भवन के माध्यम से भी सीखने में मदद मिल सकती

है। उदाहरण के तौर पर यदि बच्चों के पाठ्यपुस्तकों में दिए गए किसी कहानी को विद्यालय के दिवारों पर चित्रों के माध्यम से उकेरा जा सकता है। पंखे की विभिन्न पत्तियों को अलग–अलग रंगों में रंगकर रंग के बदलते चक्र को आसानी से समझाया जा सकता है। विभिन्न ज्यमितीय संकल्पनाओं व आकृतियों को खिड़की, दीवार दरवाजों, सीढ़ीयों, आदि पर उकेरा जा सकता है। इसके कुछ उदाहरणों को नीचे दिया गया है।

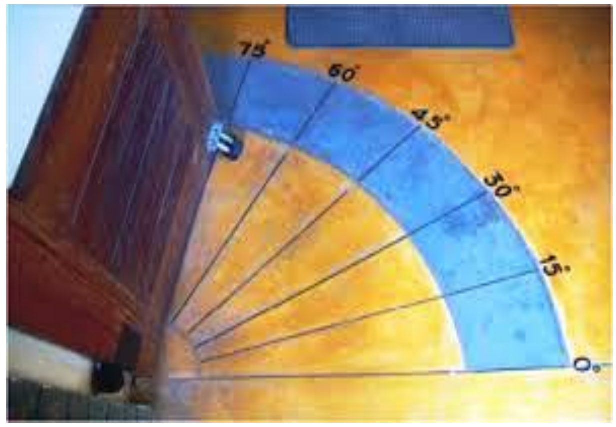

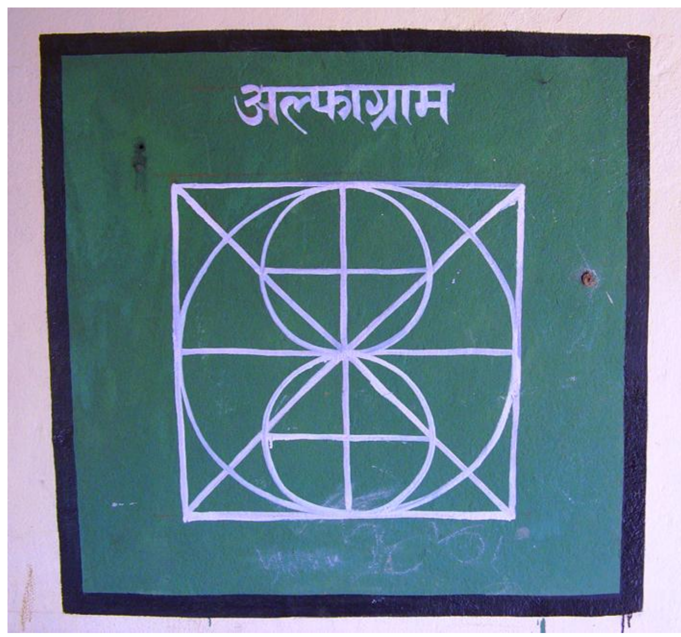

भूगोल के शिक्षण के लिए विद्यालय के खेल के मैदान में बालू के टीले बनाकर पहाड़, पठार, मैदान, मरूस्थल आदि बालू में ही नदी जैसी धरातलीय रचना देकर कर शिक्षण को सृजनात्मक रूप प्रदान किया जा सकता है। इसी तरह पुराने टायरों का उपयोग करके एक रोमांचक खेल का मैदान तैयार किया जा सकता है। कक्षाओं की दीवारे लगभग 4 फुट तक काले रंग से पोत दी जानी चाहिए जिनका उपयोग श्यामपट्ट के रूप में किया जा सके, जैसा की अगले पृष्ठ के चित्र में दर्शाया गया है।

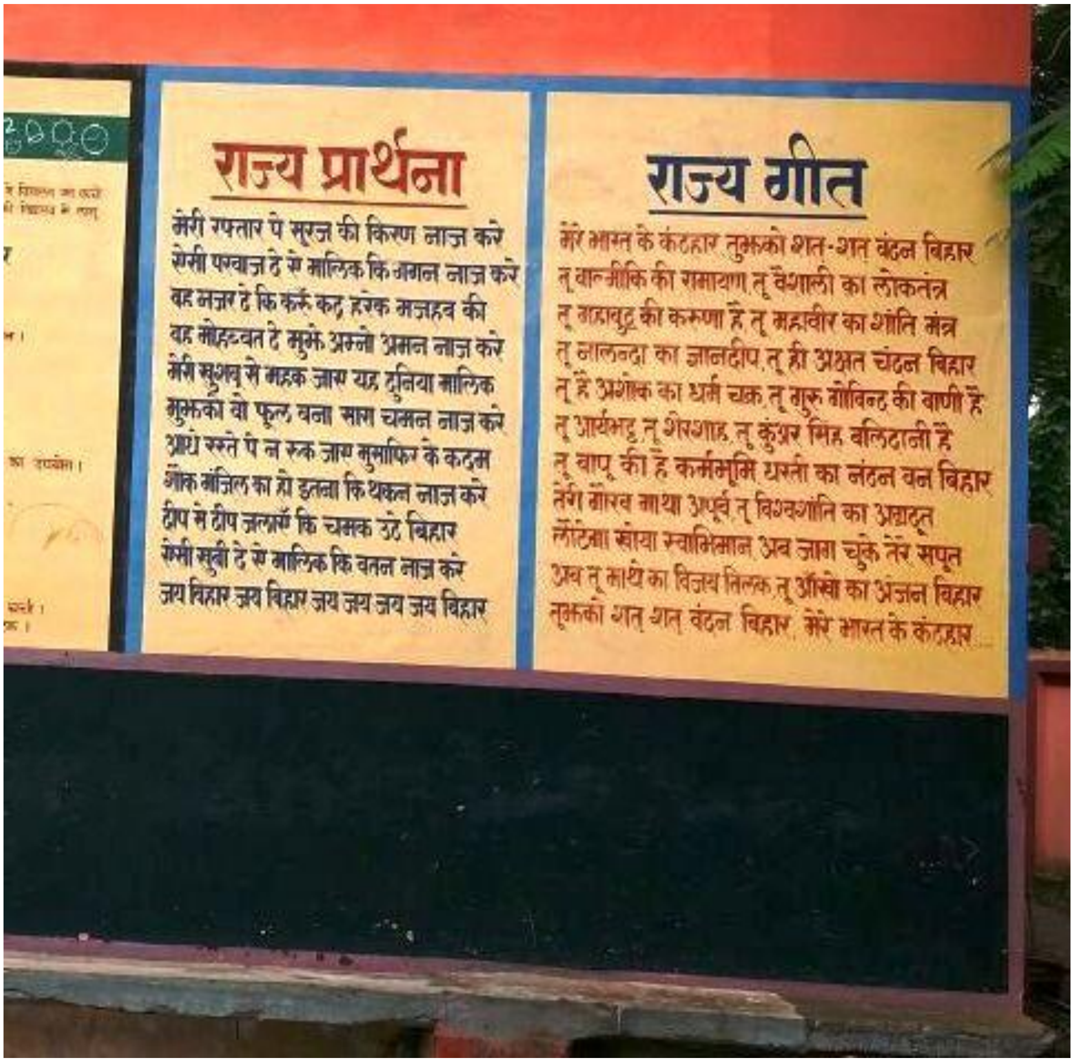

रेखागणित की आकृतियाँ फर्श पर बनी हों, कमरे का एक कोना पढ़ने की सामग्री, कहानियों की किताबें पहेली कार्ड और अन्य शिक्षा सामग्री रखने के लिए तैयार किया जा सकता है। इसका उपयोग उन बच्चों के लिए करना चाहिए जो अपना कक्षा कार्य जल्द खत्म कर लेते है। तो उन्हें इस कोने में जाने एवं अपनी पसंद की सामग्री चुनने की छूट होनी चाहिए। कक्षा की दवारो पर तरह–तरह के चार्ट लगाये जाने चाहिए जिनपर बच्चे समय–समय पर अलग–अलग चीजे सीख सकें। इस प्रकार से विद्यालय भवन को सीखने के माध्यम के रूप में परिभाषित करने को 'बिल्डिंग ऐज लर्निंग ऐड' भी कहा जाता है।

गतिविधि

आप अपने विद्यालय के भवनों को सीखने के जीवन्त माध्यम के रूप में बनाने के लिए कुछ उपायों को सोंचे तथा अध्ययन केन्द्र पर उनकी चर्चा करें।

2.8 समेकन

इस इकाई में आपने विद्यालयों में होनेवाले कई साकारात्मक परिवर्तनों को समझा। आपने यह जाना कि किस तरह से शिक्षा का अधिकार कानुन बनने से विद्यालय शिक्षा में कई तरह के बदलाव अपेक्षित हैं। ये बदलाव विद्यालय भवन के निर्माण से लेकर विद्यालय में शिक्षण तक में आने चाहिए। इसके साथ ही, समावेशी शिक्षा की अवधरणा को भी लागू करने के प्रयासों से आप अवगत हुए। आपने शिक्षा के स्वरूप पर नवाचारी सूचना प्रौद्योगिकी के प्रभावों के बारे में भी जाना। इसके साथ ही, सीखने–सिखाने के माध्यम के रूप में विद्यालय भवन के उपयोग की समझ भी बनाई। इन सभी परिवर्तनों को आप अपने विद्यालय में भी अनुभव कर रहे होंगें या आगे करेंगे। यह जरूरी है कि इनके प्रति एक सुविज्ञ दृष्टिकोण अपनाते हुए विद्यालय में इनके प्रति साकारात्मक माहौल बनाया जाए। इसके लिए शिक्षकों विशेष प्रयास करने होंगे जिसकी दिशा दिखाने के लिए इस इकाई में कुछ महत्वपूर्ण परिवर्तनों की चर्चा की गई। साथ ही, यह भी स्पष्ट है कि विद्यालय को लेकर और भी कई परिवर्तन हैं जिनको इस इकाई में शामिल नहीं किया गया है। शिक्षकों से यह अपेक्षा है कि वे विद्यालय में आनेवाले परिवर्तनों का विश्लेषण सदैव करते रहेंगे।

2.9 मूल्यांकन के लिए प्रश्न

1. शिक्षा के अधिकार में ऐसे कौन–कौन से प्रावधन हैं, जिसकी वजह से विद्यालय व्यवस्था में बदलाव की आवश्यकता महसूस होती है।
2. शिक्षा के अधिकार अधिनियम के विभिन्न भागों के क्या शीर्षक हैं, उनका उल्लेख करें।
3. शिक्षा के अधिकार अधिनियम का विश्लेषण करें।
4. समावेशी शिक्षा की क्या अवधारणा है। स्पष्ट करें।
5. कुछ लोगो का मानना है कि समावेशी शिक्षा के नाम पर विशेष आवश्यकता वाले बच्चों को सामान्य विद्यालयों में नामांकित करके उनके सर्वांगीण विकास को रोका जा रहा है। आप इस विचार से सहमत है या नहीं, तर्क सहित उत्तर दें।
6. विद्यालयों में शिक्षण के दृष्टिकोण से सूचना एवं संचार तकनीक की आवश्यकता क्यों है, उदाहरण सहित समझाएँ।
7. एक विद्यालय को सृजनशील बनाने के लिए कौन–कौन से प्रयास किए जाने चाहिए। विद्यालय भवन को केन्द्र में रखकर बताएं।
8. विद्यालय में परिवर्तन लाने के दृष्टिकोण से एक शिक्षक की क्या भूमिका हो सकती है, उदाहरण देते हुए समझाएं।

इकाई–3
शिक्षक वृत्तिक विकास के आयाम

3.1 परिचय
3.2 सीखने के उद्देश्य
3.3 पूर्व अनुभव
3.4 शिक्षक वृत्तिक विकास
3.4.1 शिक्षक वृत्तिक विकास (Professional Development) की अवधारणा
3.4.2 शिक्षक वृत्तिक विकास के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रमों के स्वरूप
3.4.3 शिक्षक में नतृत्व गुण का विकास
3.5 शिक्षक की अस्मिता
3.5.1 शिक्षक अस्मिता की संकल्पना
3.5.2 शिक्षक अस्मिता और वृत्ति/पेशे से सम्बंधित तनावों की समझ
3.6 समेकन
3.7 मूल्यांकन के लिए प्रश्न

3.1 परिचय

आज समाज में शिक्षा का जो स्वरूप है, उसके लिए शिक्षकों से विशेष तैयारी की आवश्यकता है। शिक्षण वृत्ति को कई प्रकार से सम्वर्द्धित करने के लिए शिक्षक से सम्बंधित विभिन्न आयामों को स्वयं उन्हें ही पहले समझने की जरूरत है। इस इकाई में आप वृत्तिक कौशल की अवधारणा एवं आवश्यकता से तो अवगत होंगे ही वृत्तिक विकास हेतु संचालित विभिन्न प्रशिक्षण कार्यक्रमों की भी जानकारी आपको हो पायेगी। शिक्षक के लिए आवश्यक कौशलों की जानकारी के साथ–साथ आप विभिन्न आवश्यक कौशलों की आवश्यकता को भी महसूस कर उसके विकास हेतु प्रयत्नशील होंगे। इन वृत्तिक कौशलों के अभाव में कई शिक्षकों को अनावश्यक दवाब एवं तनाव का भी शिकार होना पड़ता है। आप तनाव के उन कारणों की पहचान कर उसे दूर करने में सक्षम हो पायेंगे तथा जिन माध्यमों के द्वारा आपमें वृत्तिक कौशलों का विकास हो सकता है उन माध्यमों की जानकारी प्राप्त कर उसके उपयोग द्वारा आप स्वंय में इन आवश्यक वांछित कौशलों का विकास कर सकेंगे। इसके साथ ही अध्यापक अस्मिता का प्रश्न भी महत्वपूर्ण होता जा रहा है क्योंकि अध्ययनों से यह निकलकर आ रहा है कि अध्यापक की अस्मिता का उसके शिक्षण से गहरा सम्बंध है। साथ ही, शिक्षक वृत्तिक विकास एवं अस्मिता के दृष्टिकोण से उसमें नेतृत्व गुण का विकास भी महत्वपूर्ण हैं जिसकी चर्चा इस इकाई में की जाएगी।

3.2 सीखने के उद्देश्य

- शिक्षक वृत्तिक विकास की अवधारणा को समझना तथा उसके आलोक में अपनी वृत्ति/पेशे को सम्वर्धित करने के तरीकों को अपनाना।
- शिक्षक वृत्तिक विकास के लिए शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रमों के महत्व एवं स्वरूप को समझना।
- शिक्षक की अस्मिता से जुड़ी अवधारणाओं को समझना।
- शिक्षक में नेतृत्व गुण की अवधारणा को समझना तथा उसके विकास के तरीकों से अवगत होना।
- शिक्षण वृत्ति में उत्पन्न होनेवाले तनावों के प्रबंधन की समझ बनाना।
- शिक्षण वृत्ति के संवर्धन में शिक्षक के स्वाध्याय, लेखन एवं सहकर्मियों की भूमिका को समझना।

3.3 पूर्व अनुभव

आप शिक्षण पेशे से जुड़े है। आपको अपने कार्यों के बेहतर संपादन के लिए कई बातें सीखनी पड़ती होगीं। अपने कार्य संपादन के पश्चात आप निश्चित रूप से सोचते होंगे कि किए गए कार्य को और बेहतर तरीके से संपादित करने हेतु आपको स्वंय में किन–किन गुणों, शिक्षण विधियाँ, प्रक्रियाओं के प्रति संवेदित होना चाहिए। आप हमेशा आवश्यकतानुसार अपने वृत्तिक विकास के लिए स्वाध्याय, लेखन एवं आवश्यक सलाह सुझाव प्राप्त करते रहे होंगे। अपने विद्यार्थी जीवन में भी आपने शिक्षकों को अपना कार्य करते देखा होगा साथ ही, आप स्वंय भी शिक्षण कार्य कर रहे हैं। आपके इन अनुभवों से इस इकाई को समझने में काफी सुविधा होगी।

3.4 शिक्षक वृत्तिक विकास

शिक्षा आयोग की रिपोर्ट (1964–66) के अनुसार ''इसमें कोई संदेह नहीं कि शिक्षा के स्तर और राष्ट्रीय विकास में शिक्षा योगदान को जितनी भी बातें प्रभावित करती हैं उनमें शिक्षक के गुण, क्षमता और चरित्र सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है।'' शिक्षा से सम्बंधित आगामी रिपोर्टों में भी अध्यापक के महत्त्व को लगातार रेखांकित किया जाता रहा है। राष्ट्रीय शिक्षक आयोग–1 (1983–85) की रिपोर्ट ने यह रेखांकित किया कि ''शिक्षक का दर्जा एक जटिल वैज्ञानिक संकल्पना है और विभिन्न सांस्कृतिक संदर्भों में इसका अर्थ भिन्न–भिन्न हो सकता है।'' राष्ट्रीय शिक्षा नीति की समीक्षा रिपोर्ट (1990) ने भी इस बात पर जोर दिया की ''सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया में शिक्षकों को एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण भूमिका निभानी होगी। उन्हें राष्ट्रीय विकास में सक्रिय सहभागी के रूप में जटिल कार्य करना होगा। इस संदर्भ में शिक्षकों का सामाजिक दर्जा, उनके जीवन की भौतिक दशाएँ तथा उनके कार्य का वातावरण अत्यन्त महत्त्वपूर्ण बाते हैं।'' यदि इन तीनों रिपोर्टों के उद्धृत अंशों का विश्लेषण करें तो उनमें शिक्षक की वृत्तिक भूमिका के व्यापक आयामों को रेखांकित किया गया है, जो केवल कक्षा शिक्षण से नहीं बल्कि उसके पूरे व्यक्तित्व से जुड़ी हुई भूमिका है। साथ ही, यह भी देखने में आया है कि शिक्षक की वृत्तिक भूमिका धीरे–धीरे उसके अधिगम तथा अनुभवों के आधार पर बनती है। यह प्रक्रिया शिक्षक के सायास तथा अनायास दोनों तरह के अनुभवों के माध्यम से चलती रहती है। इस संदर्भ में विशेष चर्चा अगले खण्ड में की जा रही है।

3.4.1 शिक्षक वृत्तिक विकास की अवधारणा

निम्नलिखित दो उदाहरणों में शिक्षक से सम्बंधित कुछ बातों को रखा गया है, इनका विश्लेषण करें।

उदाहरण–1

रीना प्राथमिक विद्यालय में शिक्षिका हैं। शिक्षण वृत्ति में आने से पहले उन्होंने डी.एल.एड. कार्यक्रम से प्रशिक्षण लिया था। अभी, उनको शिक्षण करते हुए दो साल हो गए हैं। अपने प्रशिक्षण और उसके बाद दो सालों से शिक्षण के आधार पर, रीना का यह मानना है कि शिक्षण करने के लिए हर रोज तैयारी करनी जरूरी है। अतः वह अभी भी अगले दिन के शिक्षण के लिए लर्निंग प्लान बनाती हैं और अपनी कठिनाईयों को उन साधनसेवियों के साथ साझा करती हैं जिन्होंने उनकी वृत्तिक तैयारी में मदद की थी।

रीना का यह मानना है कि विद्यालय का पुस्तकालय केवल बच्चों के लिए नहीं है बल्कि वह शिक्षकों के लिए भी उतना ही महत्वपूर्ण हैं। अतः विद्यालय के पुस्तकालय में वह ऐसे अध्ययन सामग्रियों को लाने की कोशिश करती हैं जिनको वे और उनके साथी शिक्षक पढ़कर कर शिक्षा के नए विमर्शों को समझ सकें। संकुल संसाधन केन्द्र पर हर महीने शिक्षकों की बैठक में वह उसमें भी सक्रिय भूमिका निभाती हैं।

उपरोक्त उदाहरण से पता चलता है कि रीना लगातार अपने कार्य को बेहतर बनाने के लिए प्रयास कर रही हैं। यह शिक्षक वृत्तिक विकास का एक उदाहरण है। इसी प्रकार, शिक्षक द्वारा अपने वृत्तिक विकास के लिए कई तरीकों को अपनाया जाता है, जिसके लिए शिक्षक शिक्षा में शिक्षक वृत्तिक विकास के नवीन संकल्पनाओं को समझना होगा। ये संकल्पनाएं लगातार बदलती रही हैं। उदाहरण के तौर पर, पहले शिक्षक के कार्य को मूलतः कौशल के रूप में देखा जाता था जिसे प्रशिक्षण देकर तैयार किया जा सकता था। लेकिन, अब यह माना जा रहा है कि शिक्षक का कार्य उसके जीवन अनुभवों से जुड़ा हुआ है। अतः कक्षा में वह जिस प्रकार से अपनी वृत्तिक भूमिका को निभाता या निभाती है, उसमें उसकी अपनी सोंच शामिल होता है। इसके साथ ही, जहां, पहले शिक्षक को ज्ञानदाता माना जाता था वहीं आज इसकी भूमिका सुगमकर्त्ता की हो गई है। इस तरह, शिक्षक के वृत्ति को समझने के नजरिए में भी कई परिवर्तन आए हैं।

इस तरह, शिक्षक शिक्षा में आए नव विचारों के आलोक मे शिक्षक वृत्तिक विकास की संकल्पना में भी सैद्धांतिक परिवर्तन हुए। इससे सम्बंधित पुरातन संकल्पनाएं प्रमुखतः व्यवहारवादी उपागम से प्रभावित प्रक्रिया, परिणाम प्रतिमान पर केन्द्रित रही है, जिसमें एक शिक्षक के स्वानुभवों को उसके विकास के दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण नहीं माना जाता था। नए उपागम में शिक्षक वृत्तिक विकास को एक चिंतनशील प्रतिमान के रूप में स्वीकारा जा रहा है। इस तरह नए सिद्धांतों के अनुरूप शिक्षक वृत्तिक विकास एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें एक शिक्षक अपने कार्यों को निरन्तर विश्लेषित करता रहता है तथा इससे प्राप्त अनुभवों से स्वज्ञान का संवर्धन भी करता है। इस संदर्भ में यह मान्यता है कि चिंतनशील प्रक्रिया के अपनाने से ही एक शिक्षक स्वदृष्टिकोण को वास्तविक रूप से विकसित कर सकता है। इस प्रकार शिक्षक वृत्तिक विकास की संकल्पना में आए नवपरिवर्तनों ने शिक्षक के अधिगम एवं कार्यों की एक नई छवि प्रस्तुत की जिसमें इसे एक सीमित व लघु प्रक्रिया से परे एक सतत् एवं दीर्घकालिक प्रक्रिया माना गया है। वृत्तिक विकास की इस संकल्पना में शिक्षण कौशलों के साथ साथ एक शिक्षक के वैयक्तिक एवं सामाजिक पहलुओं को भी उसके विकास के लिए महत्वपूर्ण माना गया है।

गतिविधि

आपके अनुसार एक शिक्षक में क्या–क्या गुण होने चाहिए जिसकें संदर्भ में उसका वृत्तिक विकास किया जाना चाहिए। शिक्षक के गुणों को सबसे पहले कॉलम में लिखें फिर उनको आप महत्वपूर्ण क्यों मानते हैं, इसे दूसरे कॉलम में लिखें।

शिक्षक / शिक्षिका के गुण		**आप उनको महत्वपूर्ण क्यों मानते है।**
1		
2		
3		
4		
5		
6		
7		
8		
9		
10		

आपका विश्लेषण :

ऐसी मान्यता है कि हमारी शैक्षिक व्यवस्था अति संरचित प्रकृति की है, जिसमें पाठ्यचर्या, पाठ्यपुस्तकों से लेकर मूल्यांकन प्रणाली तक पूर्व निर्धारित एवं पूर्वस्थापित है। ऐसी व्यवस्था में भी शिक्षक सिर्फ पुस्तकीय ज्ञान का देयता मात्र नहीं है बल्कि वह उस ज्ञान को स्वयं से परिभाषित व व्याख्यायित भी करता है। इससे तात्पर्य यह है कि शिक्षकों का कार्य उनकी पूर्वमान्यताओं, मूल्यों और पूर्वानुभवों से निरन्तर प्रभावित होता रहता है। इनके आधार पर वे अपने सिद्धांतों को गढ़ते हैं। शिक्षकों का यही सैद्धांतिक ज्ञान उनके शिक्षण की वृत्ति में प्रकट होता है।

शिक्षक की कार्य संस्कृति व सामाजिक परिदृश्य भी उसके वृत्तिक विकास का महत्वपूर्ण अंग है। उन सामाजिक, सांस्कृतिक अथवा वैचारिक संदर्भों का एक शिक्षक के कार्य करने पर विशेष प्रभाव होता है जिनसे वह जुड़ा हुआ है। वस्तुतः ये संदर्भ गतिहीन नहीं बल्कि निरन्तर परिवर्तनशील होते हैं। साथ ही उसके अपने मूल्य तथा कार्य संस्कृति की मान्यताओं के मध्य होनेवाले जटिल अंर्तसम्बंधों का भी उसके कार्य प्रणाली पर असर पड़ता है। एक सामाजिक व्यवस्था में शिक्षक अपने कार्यों को निष्पादित करता है, उत्पन्न होनेवाली समस्याओं एवं द्वंदों का सामना करता है तथा संगठनात्मक एवं प्रशासनिक उत्तरदायित्वों का निर्वाह करता है।

शिक्षक के कार्य का व्यक्तिगत आयाम जिसमें भावनात्मक व नैतिक पक्ष भी शामिल हैं, उसके वृत्तिक विकास को संवर्द्धित करते हैं। अपने विद्यार्थियों, सहकर्मियों तथा समुदाय के साथ प्रभावी सम्बंध स्थापित करने में उसके व्यक्तित्व की विशेष भूमिका होती है। इस संदर्भ में एक शिक्षक के लिए आवश्यक है कि वह अपने व्यक्तिगत गुणों को समझे तथा अपने प्रति दूसरों की प्रतिक्रियाओं को विश्लेषित करें।

वृत्तिक विकास के अन्तर्गत यह भी समझना आवश्यक है कि शिक्षक स्वयं से वृत्तिक उद्भव की प्रक्रिया के सहभागी बनते हैं तथा उनके कार्यों की अपनी जटिलता व विशेषता है। वे अपने कार्यकाल में कई चरणों से गुजरते हुए विविध अनुभव प्राप्त करते हैं। इस दौरान वे अपने वृत्तिक कार्य को भिन्न भिन्न परिप्रेक्ष्य से देखते हैं। उदाहरणतः पाठ्यचर्या, पुस्तकें, शिक्षणशास्त्र, कक्षागत प्रक्रियायें, अधिगमकर्ता की प्रकृति आदि के विषय मे उनकी धारणायें और समझ प्राप्त अनुभवों के आधार पर निरन्तर विकसित और संवर्द्धित होती रहती है।

इस प्रकार शिक्षक वृत्तिक विकास के संकल्पना का यह मानना है कि इसको एक बार में सम्पूर्ण नहीं किया जा सकता। यह कई माध्यमों से लगातार चलनेवाली प्रक्रिया है। अपने विद्यालय में शिक्षक जो प्रतिदिन करते हैं या फिर समुदाय से उनकी जो अंतःक्रिया होती है, इन सबसे उसके वृत्ति का सम्वर्धन होता रहता है।

गतिविधि

शिक्षक वृत्तिक विकास को प्रभावित करनेवाले कारकों को सूचीबद्ध करें तथा उनका शिक्षक पर पड़नेवाले प्रभावों का विश्लेषण करें।

बच्चों को सीखने के अवसर उपलब्ध कराकर ज्ञान सृजन का माहौल तैयार करना शिक्षक का प्रमुख दायित्व है। इस हेतु शिक्षकों में आवश्यक विषय–वस्तु का ज्ञान, कक्ष प्रबंधन की तकनीक, समाकरात्मक अभिवृत्ति एवं मूल्यांकन तकनीकि की जानकारी का होना आवश्यक है। शिक्षक अपनी कक्षा में जो अलग–अलग प्रकार की भूमिकाओं को निभाते हैं, उससे उनकी समझ विकसित होती है। कक्षा प्रबंधन के साथ–साथ शिक्षकों को अधिगम आधारित अनेक क्रियाकलाप भी करने होते हैं। इनमें विद्यालय में चेतना सत्र विभिन्न उत्सवों जयंतियों का आयोजन, विचारगोष्ठी, खेलकूद इत्यादि का आयोजन होता है। इन आयोजनों को कराने के दौरान शिक्षक जिस प्रकार की भूमिका निभाते हैं, उससे भी उनका वृत्तिक विकास होता है।

शिक्षकों के वृत्तिक विकास में शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रमों की काफी अहम भूमिका होती है। क्योंकि इन प्रशिक्षण कार्यक्रमों के माध्यम से नवीन सूचनाओं की संप्राप्ति, अभिवृत्ति में बदलाव, शिक्षण कौशलों का विकास शिक्षकों में हो पाता है। आइए निम्नलिखित दृष्टांत के माध्यम से इसे समझने का प्रयास करें।

रमेश काफी पुराने शिक्षक हैं। करीब 25 वर्षों से ये अध्यापन का कार्य कर रहे हैं। अचानक उन्हें संबंधित प्रखंड संसाधन केन्द्र से एक पत्र प्राप्त हुआ कि उन्हें 10 दिवसीय प्रशिक्षण में भाग लेना है। उन्हें यह बात समझ में नहीं आ रही थी कि 25 वर्षों की सेवा के बाद उन्हें क्या प्रशिक्षण दिया जाएगा। नियत समय पर उन्होंने प्रशिक्षण में अपनी उपस्थिति सुनिश्चित की। धीरे–धीरे प्रशिक्षण में उन्हें मजा आने लगा। बच्चों की सीखने की प्रक्रिया, गतिविधि आधारित शिक्षण, शिक्षण अधिगम सामग्री का निर्माण एवं उपयोग, स्थानीय स्तर पर उपलब्ध संसाधनों का शिक्षण प्रक्रिया में उपयोग जैसे विषयवस्तु पर चर्चा एवं समूह कार्य के पश्चात उन्हें लगा कि यह प्रशिक्षण तो उन्हें काफी पहले प्राप्त होना चाहिए था। उन्हें लगा कि प्रशिक्षण से उनकी क्षमता में काफी वृद्धि हुई है और उन्होंने कई नयी बातों को सीखा जो पहले के प्रशिक्षण में शामिल नहीं थे।

जरा सोचिए :–

क्या आपको लगता है कि रमेश की तरह बहुत सारे शिक्षकों में यह धारणा है कि वे अपने शिक्षण कार्य के बारे में सबकुछ जानते हैं, जिसके कारण वे किसी प्रशिक्षण कार्यकम को गम्भीरता से नहीं लेते।

प्रशिक्षण में कई लोग मिलकर शैक्षिक समस्याओं के समाधान का प्रयास कर हल ढूँढ़ने का प्रयत्न करते हैं। साथ ही शिक्षा के क्षेत्र के सभी बदलावों से अवगत होते हुए तदनुरूप स्वंय में आवश्यक दक्षता संवर्धन एवं विकास का भी कार्य करते हैं। प्रशिक्षण के माध्यम से उनमें अपने कार्य संचालन की एक विशेष दृष्टि उत्पन्न होती है। जिससे विद्यालय को काफी लाभ होता है।

प्रशिक्षण के माध्यम में शिक्षकों में योग्यता, क्षमता और प्रतिबद्धता को विकसित करने का प्रयास किया जाता है। योग्यता, क्षमता और कुशलता आत्मविश्वास को जन्म देती है जो शिक्षण व्यवसाय और संबंधित आचार संहिता के प्रति प्रतिबद्धता उत्पन्न कर सकता है। शिक्षकों में शैक्षिक बुद्धिमता के विकास के लिए स्वतंत्र रूप से पढ़ने का कौशल परस्पर संबंध स्थापना का कौशल (Interpersonal Relationship) मानवीय संबंधों के विकास का कौशल, चिंतन मनन कौशल, प्रयोग करने एवं नित नये विषयों (नवाचार) को प्रस्तुत करने का कौशल, लेखा जोखा करने का कौशल एवं प्रभावशाली एवं आनंददायक शिक्षण का कौशल का होना

आवश्यक है। इन सभी कौशलों एवं अभिवृत्तियों के विकास में प्रशिक्षण की अहम भूमिका होती है। इससे शिक्षकों की सोंच में परिवर्तन आता है और वे अपने वृत्ति को विशेष दृष्टिकोण से देखते हैं।

अध्यापक शिक्षा कार्यक्रम वह पहला अनुभव होता है जो किसी व्यक्ति के अंदर अध्यापकीय कार्य की औपचारिक धारणा को विकसित करता है। अतः, इसके अनुभव का अध्यापकों की धारणा निर्माण में क्या भूमिका है, उनकी अस्मिता को समझने के दृष्टिकोण से बहुत महत्त्वपूर्ण है।

गतिविधि

- अध्यापक वृत्तिक विकास के लिए संकुल संसाधन केन्द्र पर क्या–क्या होना चाहिए, इस संदर्भ में अपने अध्ययन केन्द्र पर चर्चा करें।
- अपने साथ प्रशिक्षण लेने वाले किन्हीं पांच शिक्षकों का केस अध्ययन करें कि प्रशिक्षण के शुरूआत होने से लेकर अब तक उनमें क्या परिवर्तन आया है। आप उनका साक्षात्कार ले सकते हैं, उनके बारे में किसी अन्य से पूछ सकते हैं और उनके विद्यालय में जाकर भी उनके विषय में अन्य शिक्षकों व बच्चों से मालूम कर सकते हैं।

शिक्षक वृत्तिक विकास के दृष्टिकोण से शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रमों का क्या स्वरूप हो सकता है, इस संदर्भ में अगले खण्ड में चर्चा की गई है।

3.4.2 शिक्षक वृत्तिक विकास के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रमों के स्वरूप

शिक्षक के वृत्तिक विकास हेतु कई प्रकार के शिक्षक प्रशिक्षण कार्य आयोजित किये जाते हैं। सामान्तः इसे सेवापूर्व एवं सेवाकालीन प्रशिक्षण, दो प्रमुख वर्गों में विभाजित किया जाता है।

सेवापूर्व अध्यापक प्रशिक्षण : आप कई प्रकार के शिक्षक को जानते होंगे जिन्होंने सेवा में आने के पूर्व ही शिक्षक प्रशिक्षण प्राप्त किया होगा। शिक्षक बनने के पूर्व शिक्षकों में आवश्यक दक्षताओं के विकास हेतु इस प्रशिक्षण का प्रावधान है। प्राथमिक माध्यमिक स्तरों हेतु अलग–अलग तरह के प्रशिक्षण की व्यवस्था है। इन प्रशिक्षणों के माध्यम से शिक्षकों को मनोविज्ञान, शिक्षा की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि, वर्गकक्ष एवं विद्यालय प्रबंधन एवं विद्यालय में पढाये जाने वाले विभिन्न विषयों की विषय वस्तु तथा वर्ग कक्ष विनिमयन की तकनीक सिखाई जाती है। साथ ही, इन प्रशिक्षणों के माध्यम से अधिगम संसाधनों का चयन संगठन एवं उपयोग करने की दक्षता विकसित करने का कार्य भी होता है। छात्रों के लिए मार्गदर्शन एवं परामर्श की आवश्यकता से भी अवगत कराया जाता है। इसमें वास्तविक परिस्थिति में आकर बच्चों के बीच पाठ विनिमयन कर शिक्षण दक्षताओं की संप्राप्ति संभव हो पाती है, वहीं सूक्ष्म शिक्षण द्वारा बारी–बारी से प्रत्येक कौशलों का विकास भी इस प्रशिक्षण द्वारा होता है। इस प्रशिक्षण के द्वारा शिक्षकों में आवश्यक अभिवृत्ति विकसित करने का भी प्रयास किया जाता है। इन प्रशिक्षण कार्यक्रमों में शिक्षकों को इस बात की भी जानकारी दी जाती है कि बच्चों के सर्वांगीण विकास के लिए समुदाय के साथ बेहतर संबंध आवश्यक है। शिक्षक का बच्चों एवं अभिभावकों से बेहतर व्यवहार शिक्षक को जहाँ सामाजिक प्रतिष्ठा दिलाता है वहीं शिक्षक में आत्मसंतोष का भाव उत्पन्न होता है।

गतिविधि शिक्षकों से सम्बंधित कुछ सेवा पूर्व प्रशिक्षण कार्यक्रमों के बारे में पता लगाएं और उनको निम्नलिखित सारणी अनुसार लिखें।	
सेवा पूर्व शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम का नाम	विवरण : प्रशिक्षण के लिए योग्यता, अवधि, स्थान, आदि

सेवाकालीन शिक्षक प्रशिक्षण : आपने अक्सर शिक्षकों को जिला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान, प्रखंड संसाधन केन्द्र एवं संकुल केन्द्रों में प्रशिक्षण हेतु जाते देखा होगा। सेवाकालीन प्रशिक्षण कार्यक्रमों को सेवारत शिक्षकों की कार्यक्षमता एवं कुशलता में वृद्धि करने हेतु निर्मित किया जाता है। 1986 की राष्ट्रीय शिक्षा नीति में अध्यापक शिक्षा को जीवन पर्यन्त चलनेवाली प्रक्रिया के रूप में स्वीकृत किया गया है। अतएव सेवाकालीन प्रशिक्षण को भी अपरिहार्य बना दिया गया है। वर्तमान समय में प्रारंभिक स्तर तक के शिक्षकों के लिए बीस दिवसीय सेवाकालीन प्रशिक्षण का प्रावधान है।

आज का युग ज्ञान के विस्फोट का युग है। शिक्षा के क्षेत्र में हमेशा नवीन विचारधाराओं का उदय हो रहा है जिसके कारण पूरी शिक्षण प्रक्रिया में व्यापक बदलाव आया है। इन बदलावों को समझकर शिक्षक स्वंय में आवश्यक कुशलतायें विकसित करने की अनिवार्यता को समझकर उसके लिए प्रयास करते रहें इसके लिए सेवाकालीन प्रशिक्षण की आवश्यकता पड़ती है। पाठ्यचर्या, पाठ्यक्रम एवं पाठ्यपुस्तकों के स्वरूप में भी परिवर्तन होने के कारण इन परिवर्तनों के अनुरूप शिक्षकों को स्वयं को ढालने के लिए भी सेवाकालीन प्रशिक्षण चाहिए। कई बार शिक्षक अपने विद्यालय की समस्याओं का हल नहीं कर पाते। इन समस्याओं के कुछ हद तक हल बताने में सेवाकालीन शिक्षक प्रशिक्षण की अहम भूमिका होती है। शिक्षण के क्रम में आनेवाली शैक्षिक समस्यायें जिनका समाधान शिक्षक अपने स्तर से नहीं कर पाते संकुल एवं प्रखंड स्तरीय प्रशिक्षण कार्यक्रमों के द्वारा आसानी से कर लेते हैं।

सेवाकालीन अध्यापक शिक्षा कार्यक्रम में ज्ञान के अद्यतनीकरण हेतु स्वाध्याय पर बल, साथी अधिगम, सामुदायिक अंतःक्रिया, आवर्ती प्रशिक्षण कार्यक्रमों में प्रतिभागिता एवं निरंतर शिक्षा कार्यक्रमों का उपयोग किया जाता है। अगर शिक्षक सदैव अपने ज्ञान को अद्यतन नहीं रखेंगे तो वे बच्चों को आगे बढ़ने में पूरी तरह मदद नहीं कर सकेंगे। शिक्षा में मल्टीमिडिया, सूचना संचार प्रौद्योगिकी ने भी आज अपनी पैठ बनाई है। चारों तरफ ज्ञान के स्रोत विखरे पड़े हैं। इन स्रोतों के प्रभावी उपयोग के लिए प्रशिक्षण काफी उपयोगी हैं क्योंकि बिना उपयोगी दिशा निर्देश के इनके उपयोग की कुशलता प्राप्त करना काफी मुश्किल है।

गतिविधि	
शिक्षकों से सम्बंधित कुछ सेवा पूर्व प्रशिक्षण कार्यक्रमों के बारे में पता लगाएं और उनको निम्नलिखित सारणी अनुसार लिखें।	
सेवा पूर्व शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम का नाम	विवरण : प्रशिक्षण के लिए योग्यता, अवधि, स्थान, आदि

एक शिक्षक के रूप में यह आपकी अहम जिम्मेवारी है कि आप स्वयं अपने वृत्तिक विकास के अवसरों का सृजन करें। यह जरूरी नहीं है कि केवल किसी औपचारिक प्रशिक्षण के माध्यम से ही वृत्तिक विकास को किया जा सकता है। बल्कि, वृत्तिक विकास का बहुत व्यापक अवसर शिक्षकों स्वयं उनके अपने विद्यालय में स्वतः ही प्राप्त होते हैं और सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि शिक्षक अपने वृत्तिक विकास की योजना को स्वयं निर्मित कर सकते हैं।

गतिविधि

अध्ययन के पर चर्चा करने हेतु

- अपने डी.एल.एड. कार्यक्रम के विभिन्न पक्षों को रेखांकित करते हुए यह विश्लेषण करें कि वे आपके वृत्तिक विकास में क्या योजदान दे रहे हैं। इसके लिए अपने अध्ययन केन्द्र पर एक परिचर्चा का आयोजन करें।
- क्या शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम से एक शिक्षक का सम्पूर्ण वृत्तिक विकास सम्भव है? चर्चा करें।
- आप किसी ऐसे शिक्षक को चुने जिसे आप अच्छा शिक्षक मानते हैं और उसके गुणों का विश्लेषण करें। क्या वे गुण वृत्तिक विकास के माध्यम से आप स्वयं में ला सकते हैं? विचार करें।
- आप स्वयं का मूल्यांकन करें और यह देखें कि शिक्षण वृत्ति के कौन से पक्ष आपमें मजबूत हैं और कौन से कमजोर। अपने वृत्ति के कमजोर पक्षों को बेहतर बनाने के लिए आप क्या–क्या कर सकते हैं। इसपर चिंतन करें।
- अपनी आवश्यकता के अनुसार एक प्रशिक्षण कार्यक्रम की रूपरेखा का निर्माण करें।

3.4.3 शिक्षक में नेतृत्व गुण का विकास

समकालीन शैक्षिक विमर्शों में शिक्षक के वृत्तिक विकास के अंतर्गत उसमें नेतृत्व गुण को प्रोत्साहित करने पर जोर दिया जा रहा है। लेकिन, इसके साथ यह सवाल उठता है कि शिक्षक को किस प्रकार का नेतृत्व करना चाहिए। इस संदर्भ में नेतृत्व के कुछ प्रकारों को यहां दिया जा रहा है। इनके आधार पर विश्लेषण करें कि शिक्षक के लिए किस प्रकार का नेतृत्व गुण महत्वपूर्ण है।

सहयोगात्मक नेतृत्व : सहयोगात्मक नेतृत्व की धारणा दो आवश्यक विचारों पर आधारित हैः एक कार्य दल और आम सहमति। इस दृष्टिकोण में बहुत सारे निर्णय लिये जाते हैं जो कि सभी शिक्षकों की आम सहमति पर आधारित होते हैं। यह आम सहमति समूह चर्चा या वृहद सलाहों/मशविरों के बाद बनाई जाती है जिसमें सभी के विचारों को दृष्टिगत रखने का प्रयास होता है। यद्यपि ऐसा लग सकता है कि सहयोगात्मक नेतृत्व अग्रणी और परिवर्तन के प्रबंधन में एक सकारात्मक दृष्टिकोण है, क्योंकि यह आम सहमति और एकता को मानकर चलता है। कुछ आलोचक इस दृष्टिकोण पर यह कहकर प्रश्नचिन्ह खड़ा करते हैं कि इसमें परिवर्तन की गति कभी कभी आम सहमति बनाने के लिये पर्याप्त समय नही देती हैं। दूसरे भी इस पर अपना तर्क देते है कि किसी भी टीम लीडर को हमेशा ही यह महसूस होता है कि लिये गये निर्णयों के परिणामों के लिये अन्ततः वह स्वयं जवाबदेह होंगे और इसीलिये वे सामूहिक निर्णय लेने को ज्यादा कारगर नहीं मानते हैं।

वितरित नेतृत्व : हाल के वर्षों में शैक्षिक नेतृत्व के तरीकों में सबसे अधिक चर्चा वितरित नेतृत्व का है। वितरित नेतृत्व का अर्थ विद्यालय के भीतर कार्यों की जवाबदेही के ऐसे वितरण से है जो कई सारे लोगों के बीच में बंटी हुई होती है। नेतृत्व का वितरण संगठनात्मक मूल्यों और व्यक्तिगत कुशलता के आधार पर हो सकता है। एक मत के अनुसार, विद्यालय में वितरित नेतृत्व को वास्तविक तौर पर संपादित कर पाना बहुत मुश्किल है क्योंकि यहां कार्यों को करने का एक स्थापित पदानुक्रम है जो वितरित नेतृत्व की भावना का विरोध करती है।

प्रजातांत्रिक नेतृत्व : आवश्यक रूप से प्रजातांत्रिक विद्यालयी नेतृत्व एक ऐसा वातावरण बनाने की कोशिश करता है, जिसमें भागीदारी, मूल्यों की भागीदारी, खुलापन और लचीलापन हो। प्रजातांत्रिक विद्यालयी नेतृत्व के लिये सुनना, समझना, बातचीत, बोलना, तर्क और मतभेदों को एक अच्छे कार्य हेतु सहनिर्भरता से सुलझाने की आवश्यकता होती है। एक प्रकार से देखें तो नेतृत्व की इस भावना से विद्यालय के शिक्षकों एवं विद्यार्थियों में नेतृत्व गुण के विकास में स्वतः ही मदद मिलती है।

रूपान्तरित नेतृत्व : यह उन नये उद्देश्यों को पहचानने से संबंधित है जो प्रचलित कार्यशैली में परिवर्तन लाये और दूसरों को विश्वास दिलाये कि वे जितना सोचते है उससे अधिक पा सकते है। रूपान्तरित नेतृत्व एक लीडर की भूमिका पर सबसे अधिक जोर देता है। इसके लीडर के पास एक तरह की दृष्टि होती है कि भविष्य का संगठन कैसा दिखेगा, पहचानता है कि उसके सहयोगी उसकी दृष्टि (vision) के साथ इत्तेफाक रखते हैं और यदि वह पाने योग्य है तो उसके लिये वह उन्हें विश्वास दिलाता है कि यह ूवतजी चनतेनपदह है और उसको पाने के लिये एक साथ मिलकर कार्य करते है।

गतिविधि उपरोक्त वर्णित नेतृत्व गुणों के बारे में अपने विद्यालय के अन्य शिक्षकों से चर्चा करें और यह पता लगाएं कि वे किस प्रकार के नेतृत्व गुण को महत्वपूर्ण मानते हैं और क्यों? तदानुसार निम्नलिखित सारणी को भरें।	
नेतृत्व गुण	**क्यों महत्वपूर्ण है**
सहयोगात्मक नेतृत्व	
वितरित नेतृत्व	
प्रजातांत्रिक नेतृत्व	
रूपान्तरित नेतृत्व	
आपकी टिप्पणी :	

यदि विद्यालय कें संदर्भ में नेतृत्व गुण को समझें तो प्राधानाचार्य की बात सबसे पहले याद आती है। शिक्षक भी स्वयं भावी प्रधानाचार्य के रूप में ही होता है। अंतः उसमें भी नेतृत्व गुण की उतनी ही अपेक्षा है जितनी की प्रधानाचार्य से।

गतिविधि

विद्यालय में अपने एक कठिन दिन के बारे में सोचकर आपके नेतृत्व में की जाने वाली सभी गतिविधियों की सूची बनाएं।

चर्चा : लीडर के रूप में आपके सामने रोजाना बहुत सारे काम हो सकते हैं जैसे : विद्यालय आने वाले छात्रों एवं अपने साथी अध्यापकों का स्वागत करना, प्रातःकालीन सभा का नेतृत्व करना, और यह सुनिश्चित करना कि सभी कक्षाओं में समय पर पाठों का शिक्षण आरम्भ हो गया हो इत्यादि। इससे आपके अंदर किस प्रकार का भाव जागृत होता है? अध्ययन केन्द्र पर चर्चा करें।

3.5 शिक्षक की अस्मिता

अस्मिता की संकल्पना को अध्यापक के संदर्भ में किस तरह से स्थापित किया जा सकता है, यह एक बड़ा प्रश्न है, जिससे सम्बंधित कुछ सिद्धांतों की चर्चा इस खण्ड में की जाएगी। इसके पहले भाग में आपने शिक्षक के वृत्तिक विकास के संदर्भ में समझ बनाते हुए यह जाना कि उससे सम्बंधित नवाचारी विचार क्या हैं और उनको प्राप्त करने में शिक्षक प्रशिक्षण की क्या भूमिका हो सकती है। यदि देखें तो पहले वाले खण्ड में जिन मुद्दों की चर्चा की गई है, उनका शिक्षक के अस्मिता निर्माण से गहरा सम्बंध है।

चुंकि, शिक्षक की अस्मिता या पहचान से सम्बंधित अवधारणातमक चर्चा यहां पहली बार की जा रही है अतः इससे सम्बंधित कुछ प्रमुख सिद्धांतों को समझना जरूरी है जो आगे दिया जा रहा है।

3.5.1 शिक्षक अस्मिता की संकल्पना

अस्मिता के माध्यम से हम अपने बारे में अपनी धारणा व्यक्त करते हैं और अपनी उस छवि को व्यक्त करते हैं जैसा हम दूसरो के समक्ष रहना चाहते हैं। इसी तरह, अध्यापक अपने साकारात्मक एवं नकारात्मक सोच, आत्मविश्वास एवं आत्मसंतुष्टि, विद्यार्थियों के प्रति दृष्टिकोण, भावनातम्क लगाव आदि के माध्यम से अपनी वृत्तिक अस्मिता को गढ़ते हैं। पहले के शोधों ने अस्मिता को स्थायी माना जाता रहा जो कि अपने कार्य के संदर्भ पर आधारित थे या फिर खण्डित रूप में थे। लेकिन नवीन शोध में यह पाया गया कि अस्मिता न तो स्थायी होती है और न ही खण्डित, बल्कि वे तो अध्यापक की उन क्षमताओं पर टिकी होती हैं जिनकी मदद से वह अलग–अलग परिस्थितियों से निपटता है।

पिछले दो दशकों में अध्यापक से सम्बंधित हुए शोधों में अस्मिता और अस्मिता निर्माण के मुद्दों ने केन्द्रीय स्थान लेना शुरू किया है जिसमें अध्यापकों के विश्वास, प्रवृत्ति, जीवन इतिहास, और व्यक्तिगत वृतांतों को समझने पर जोर दिया जा रहा है। इसके साथ–साथ, शिक्षक शिक्षा और अस्मिता निर्माण में अध्यापक के भावनात्मक पक्षों पर शोध किया जा रहा है। इससे यह इंगित होता है कि अध्यापक के कार्यात्मक पक्षों से आगे बढ़ते हुए उनके मानवीय पहलुओं को भी महत्त्वपूर्ण माना जा रहा है तथा उनकी अस्मिता को एक प्रभावी कारक के रूप में स्वीकारा जा रहा है। विभिन्न सैद्धांतिक दर्शनों के माध्यम से अब यह विमर्श होने लगा कि अध्यापकों को अपनी अस्मिता का संज्ञान अवश्य होना चाहिए तथा उन्हें राजनैतिक, ऐतिहासिक या सामाजिक शक्तियों को भी समझना चाहिए जो उनकी अस्मिता को आकार देते हैं। एक अध्यापक का अस्मिता निर्माण उसके कार्य के दृष्टिकोण से विशेष महत्त्व रखता है। अध्यापक के व्यक्तिगत संदर्भों उदाहरणतः जेण्डर, जाति, वर्ग, सामाजिक व आर्थिक स्थिति को वृत्तिक विकास से जोड़कर देखने पर भी बल दिया गया है। इसके साथ ही, सिद्धांतवादियों ने इस बात पर भी बल दिया कि अध्यापक अपने अभिकरण (एजेन्सी) का इस्तेमाल करें, अपनी आवाज को मुखर करें तथा अपने प्राधिकार (ऑथोरिटी) का प्रयोग स्वयं के वृत्तिक विकास और अस्मिता को आकार देने के लिए करें। साथ ही, अध्यापक अस्मिता को लेकर अवधारणात्मक अध्ययनों पर जोर बढ़ा और इसे शोध का एक विस्तृत क्षेत्र भी माना जाने लगा।

यह देखा जा रहा है कि अध्यापक की अस्मिता सामाजिक तौर पर निर्मित होती है, इसलिए समाज की सोच में परिवर्तन होने पर उसमें भी बदलाव आता है तथा अध्यापक की नयी अस्मिता का निर्माण होता है। साथ ही, यह भी माना जा रहा है कि अध्यापक की मान्यताएं, अभिवृत्ति तथा व्यवहारिक प्रतिक्रियाएं सामान्यतः चीरकालिक और अपेक्षतया स्थायी होती हैं। उनकी संज्ञानात्मक और भावात्मक अस्मिता भी एक दूसरे के अंतःक्रिया से चिरस्थायी मान्यताओं व विश्वासों का निर्माण करती है। अतः एक प्रकार से अध्यापक की धारणाओं में परिवर्तन की जड़े उसके व्यक्तित्व के व्यापक आयामों जैसे सामाजिक, संज्ञानात्मक व

भावनात्मक से जुड़ी हुई है। एक अध्ययन से यह निष्कर्ष निकलकर आया है कि अध्यापक बनने का अर्थ है—(अ) अस्मिता को बदलना, (ब) अपने व्यक्तिगत समझ और आदर्शों को संस्थागत वास्तविकता के साथ समंजित करना, और (स) यह निर्णय लेना कि अपने शिक्षण कार्य में स्वयं को किस प्रकार से प्रस्तुत करना है''। इस प्रकार, अध्यापक जब कक्षा में अपने कार्य को करते हैं तो वे कई आंतरिक और बाह्य परिस्थितियों के मध्य अंतःक्रिया कर रहे होते हैं।

अस्मिता के निर्माण में भावनाओं का अहम भूमिका होती है। भावना एक मजबूत कड़ी है। कई शोधों में यह व्यक्त किया गया है कि अध्यापक जिन वृहत सांस्कृतिक, नीतिगत और सामाजिक संरचना में रहता और आपना काम करता है, उनके भावनात्मक संदर्भ तथा जीवन के वैयक्तिक एवं वृत्तिक तत्वों, अनुभवों, विश्वासों एवं कार्यों के अंतर्सम्बंध होता है और इस सब के बीच एक तनाव भी होता है जो अध्यापक के अभिकरण को प्रभावित करता है और अंततः उसके वृत्तिक अस्मिता को भी प्रभावित करता है। अभिकरण से उनका तात्पर्य है वैसी क्षमता जिससे अपने लक्ष्यों को प्राप्त किया जा सके।

अध्यापक की अहम भूमिक सामाजिक पुनर्निर्माण में होती है, लेकिन अध्यापक और विद्यार्थियों के बीच बढ़ते सामाजिक एवं सांस्कृतिक अंतर चिंता का विषय है क्योंकि यह अध्यापक को अपने अहम भूमिका को निभाने से रोक सकते हैं। तालमेल में इस कमी के कारण अध्यापकों का विद्यार्थियों के अभिवृत्तित पर भी गहरा प्रभाव पड़ता है, खासकर वैसे विद्यार्थियों के प्रति जिनका संदर्भ अध्यापक के अनुभव के बाहर है।

अध्यापक अपनी अस्मिता का बोध कैसे करते हैं, इस संदर्भ में सर्जनवादी विकासात्मक दृष्टिकोण (Constructivist Developmental Theory) की पड़ताल करना अहम हैं। इस बारे में केगन का सिद्धांत महत्त्वपूर्ण है, जिसने अपने सिद्धांत के माध्यम से वयस्कावस्था में विकासात्मक अवस्थाओं के अलग स्वरूप की चर्चा की है। उनके सिद्धांत में अध्यापक की अस्मिता को लेकर कुछ बुनियादी सवाल उठाए गए हैं। जैसे—अध्यापक अपने सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक एवं ऐतिहासिक ताकतों का बोध कैसे करते हैं? वे अन्य के साथ अपने सम्बंधों का बोध कैसे करते हैं?

सर्जनवादी विकासात्मक दृष्टिकोण सिद्धांत के अनुसार, अध्यापक जिस प्रकार से अपने अनुभवों का अर्थ निकालते हैं वह अलग—अलग विकासात्मक अवस्थाओं में अलग—अलग होगा जो कि समय के साथ बनते हैं। ये अलग—अलग अर्थ अध्यापक के उन बदलती क्षमताओं की तरफ इशारा करते हैं जिनके आधार पर वे अपने अनुभवों को किसी परिप्रेक्ष्य में देख पाते हैं। अपने विकासात्मक अवस्थाओं के आधार पर ही वे अपने शिक्षण के विविध अनुभवों जैसे—शिक्षण विधि, अनुशासन, विषयवस्तु, अध्यापक शिक्षा कार्यक्रम, आदि का अलग—अलग अर्थ निकाल पाते हैं। अतः विकासात्मक अवस्थाएं एक प्रकार से उन विशिष्ट तरीकों को समझने में मदद करते हैं जिस प्रकार से किसी विशेष अवस्था में अध्यापक सोचते हैं।

गतिविधि

आप अपने और आस—पास के कुछ विद्यालय के ऐसे शिक्षकों से बातचीत करें जिनको शिक्षक बने कम से कम पांच साल हो गया हो। उनसे यह चर्चा करें कि शिक्षक बनने के शुरूआती समय से लेकर अबतक वे स्वयं में क्या—क्या परिवर्तन देखते हैं।

उन परिवर्तनों को सूचीबद्ध करें और उनका सर्जनवादी विकासात्मक सिद्धांत के अनुसार विश्लेषण करें।

यदि सर्जनवादी विकासात्मक सिद्धांत के दृष्टिकोण से देखें तो कई बिन्दु उभर कर आते हैं। इसमें **यंत्रीकृत ज्ञाता** (instrumental knower), **समाजीकृत ज्ञाता** (socializing knower) और **स्वरचित ज्ञाता** (self-authoring knower) की अवधारणा महत्त्वपूर्ण है। यंत्रीकृत ज्ञाता के रूप में, एक अध्यापक सामाजिक–सांस्कृतिक, राजनीतिक और ऐतिहासिक कारकों को अपने से दूर मूर्त अवस्था में देखता है। इस अवस्था में वह अन्य के साथ अपने सम्बंधों को भी एक विशेष रूप में देखता है। उसके लिए अध्यापक की भूमिका बहुत ठोस और स्पष्ट होती है। उसके अन्य के साथ अंतःक्रिया के नियम निर्धारित होते हैं। दूसरों के साथ अपने सम्बंध पर उसका अपना कोई परिप्रेक्ष्य नहीं होता है। एक प्रकार से उनका व्यवहार वैसा ही होता है जैसा दूसरे उनके साथ करते हैं। वे अपने अनुभवों को भी बाह्य और ठोस मानते हैं और उन्हें अच्छे या बुरे के सामान्य कोटियों में बांट देते हैं। वे चिंतन–मनन करने से स्वयं को बचाते हैं। केगन के अनुसार, इस अवस्था में अध्यापक अपने भूमिका को सिर्फ इस रूप में लेता है कि उसे अपने उद्देश्यों व आवश्यकताओं की पूर्ति करनी है। चूंकि, अध्यापक के पास अपना कोई दृष्टिकोण नहीं होता है अतः वह स्वयं को अभिव्यक्त कर पाने में सक्षम नहीं होते हैं। उसका स्व मूलतः उसकी आवश्यकताओं, आकांक्षाओं और रूचियों पर ही केन्द्रित रहता है। इसीकारण, उसके द्वारा चिंतन–मनन का किया गया कोई भी काम मूलतः मूर्त और सीधे–सपाट होते हैं तथा उनमें गहराई नहीं होती है। इस अवस्था में अध्यापक पर अन्य के मत हावी होते हैं।

अपने समाजीकृत ज्ञाता अवस्था में, अध्यापक अपने संदर्भ के सामाजिक–सांस्कृतिक, राजनीतिक एवं ऐतिहासिक कारकों के अनुरूप ही अपनी अस्मिता को बनाने की कोशिश करते हैं। वे उनके विचारों को ही समर्थन करते हैं तथा उनपर अपना कोई मत देने में असमर्थ हाते हैं। इस दौर में अध्यापकों पर उपरोक्त वर्णित कारकों के मूल्यों का दबाव बना रहता है। यदि इस बात कि चर्चा करें कि इस अवस्था में अध्यापक अपने सम्बंधों को कैसे निर्मित करते हैं तो यह जान पड़ता है कि अध्यापक की अस्मिता मुख्यतः अन्य के विचारों और अपेक्षाओं के अनुसार ही बनता है। वे अन्य के भावनाओं के साथ अपने को जोड़कर देखते हैं और दूसरों को अपने प्रति तथा अपने को दूसरों के प्रति जिम्मेदार मानते हैं। चूंकि अध्यापक अन्य की नजरों में अच्छा बनना चाहते हैं अतः वे उन बातों के साथ द्वंद में रहते हैं जो दूसरों को पसन्द नहीं है और जिससे उनकी छवि खराब हो। अपनी आलोचना को अध्यापक अपने अपमान से जोड़कर देखते हैं। इस अवस्था में दूसरों के साथ सम्बंधों के आधार पर ही अध्यापक अपनी अस्मिता का निर्माण करता है। इस अवस्था में वे वैसे ही बातों को कहना चाहते हैं जैसा कि सामने वाले उनसे सुनना चाहते हैं। वे अपने भाव को प्रकट करने में अधिक मुखर होते हैं। इस अवस्था को केगन ने 'अंतर्वैयक्तिक संतुलन' भी कहा है। इस अवस्था में अध्यापक अपनी सफलता को बाह्य मानक की कसौटी ही निर्धारित करते हैं। यहां बाह्य मानक वे हैं जो यह निर्धारित करते हैं कि अध्यापक को कैसे काम करना चाहिए और अध्यापक भी उसी अनुरूप कार्य करके यह मिलान करने कि कोशिश करते हैं कि क्या वे उनके अनुसार सफल हो पाए हैं। हालांकि वे इस अवस्था में चिंतन–मनन की तरफ बढ़ते हैं लेकिन उनका कार्य इस बात पह ही केन्द्रित रहता है कि सत्ता द्वारा परिभाषित अपेक्षाओं को वे कितनी बेहतरी से पूरा कर पाए हैं।

स्वरचित ज्ञाता अवस्था में, 'स्व' का निर्माण बाह्य कारकों के स्थान पर आंतरिक चिंतन के आधार पर होता है। इस अवस्था में, सामाजिक–सांस्कृतिक, राजनीतिक एवं ऐतिकासिक कारकों के प्रति अध्यापक के पास अपना परिप्रेक्ष्य एवं दर्शन होता है। यहां अध्यापक अपने संज्ञान में आनेवाली सूचना या घटना पर अपने दर्शन के अनुसार चिंतन मनन कर तथा उसके विश्लेषण के बाद कोई निष्कर्ष निकालता है। उनके पास

इस बात की सोच भी होती है कि इन कारकों का उसके जीवन पर क्या प्रभाव पड़ता हैं। अध्यापक के पास अपनी सोच होती है जिससे वह दुनिया को देखते हैं और दुनिया उनकों देखती है। वे स्वयं के स्थिति को भी स्पष्टता में समझते हैं और यह स्वयं निर्धारित करते हैं कि उन सभी कारकों के मध्य उन्हें कहां खड़ा होना है। उन कारकों द्वारा स्वयं के स्थिति को निर्धारित करनें का वे विरोध करते हैं। इस अवस्था में अध्यापकों को अपने 'स्व' की स्पष्ट समझ होती है तथा दूसरों से अपनी भावनाओं के भिन्न होने के प्रति उतरदायी होते हैं। वे दूसरों के परिप्रेक्ष्य को भी अपने में समावेशित कर पाने में सक्षम होते है यहां तक कि उनके आलोचनाओं को। वे अंतर्द्वंदात्मक भावनाओं को एकसाथ रख सकते हैं। इस अवस्था में अध्यापकों की यह समझ प्रबल होती है कि उनको समाज के साथ मिलजुलकर रहना चाहिए जिससे कि समाज और अध्यापक दोनों अपने मूल्यों, आदर्शों, लक्ष्यों को प्राप्त कर सकें। इस अवस्था में अध्यापक सबसे अच्छी तरह से अपने स्वयं के उपर चिंतन–मनन कर पाने में सक्षम होते हैं। अपने मौलिक सोच के आधार पर अपने बारे में बता सकते हैं तथा अपने कार्यों का विश्लेषण कर सकते हैं। चूंकि उनका अपने प्रति एक नज़रिया होता है अतः वे यह बता पाने में सक्षम होते हैं कि उनके सामाजिक पृष्ठभूमि, जाति, संस्कृति, अतीत ने उनकी अस्मिता के निर्माण में कैसे भूमिका निभायी। वे अपने शिक्षण के प्रति स्वयं द्वारा निर्धारित कसौटियों के आधार पर आलोचनात्मक विश्लेषण में शामिल होते हैं नकि अन्य द्वारा बनाए गए कसौटियों के आधार पर।

केगन द्वारा प्रस्तुत किया गया यह सिद्धांत अध्यापक की अस्मिता सम्बंधी साहित्यों पर नया प्रकाश डालता है। इससे अध्यापक की किसी विशेष परिस्थिति मे प्रतिक्रिया देने की क्षमता को समझने के विषय में भी एक नया दृष्टिकोण प्राप्त होता है। साथ ही, यह सिद्धांत यह भी कहता है कि एक अध्यापक की अस्मिता का विकास अवस्थामूलक प्रक्रिया है जिसमें संदर्भ ही सिर्फ महत्वपूर्ण नहीं है। यह इस बात को समझने की कोशिश करता है कि अलग–अलग अध्यापक किस प्रकार से एक ही परिस्थिति में अलग–अलग व्यवहार करते हैं। यह उनकी अवस्था पर भी निर्भर करता है कि वे अपनी आवाज और स्वायतता को किस प्रकार परिभाषित करते हैं तथा अपने अस्मिता में उनकी भूमिका को कैसे देखते हैं। अतः अध्यापक अपने कार्य के साथ अपने सम्बंध को किस प्रकार देखते हैं इसके लिए उनकी अस्मिता की विस्तृत समझ की अपेक्षा है।

गतिविधि

सर्जनवादी विकासात्मक सिद्धांत के आधार पर शिक्षक के विकास के जो तीन अवस्थाएं बतायी गयी हैं उनसे सम्बंधित मुख्य बिन्दुओं को निम्नलिखित सारणी में लिखें और विश्लेषण करें।

यंत्रीकृत ज्ञाता (Instrumental knower)	**समाजीकृत ज्ञाता** (Socializing knower)	**स्वरचित ज्ञाता** (Self-authoring knower)

3.5.2 शिक्षक अस्मिता और वृत्ति से सम्बंधित तनावों की समझ

विद्यालय की जटिल प्रक्रिया में कई ऐसे मुद्दे या प्रसंग आते हैं जिनके कारण शिक्षकों के मन में अंतर्द्वन्द या तनाव पैदा होता है। कई बार शिक्षक उनसे अकले निपट लेते हैं लेकिन कई स्थितियों में उन तनावों का स्वरूप ऐसा होता है कि शिक्षक मिलकर ही उसका समाधान कर पाते हैं। आपके आपने विद्यालय में भी प्रतिदिन के शिक्षण प्रक्रिया में कई प्रकार के तनावों की स्थिति बनती होगी।

गतिविधि

नीचे सारणी के पहले कॉलम में शिक्षक से सम्बंधित कुछ तनावों/अतर्द्वन्दों के उदाहरणों को दिया गया है। आप उन उदाहरणों में अपने अनुभवों के आधार पर अन्य उदाहरणों को जोड़े। इसके साथ ही, सारणी के दूसरे कालम में उन तनावों से निपटने के लिए आप क्या करेंगे यह लिखें :

शिक्षकों को होनेवाले तनाव या अंतर्द्वन्दों के उदाहरण	*यदि आप इस प्रकार के तनाव/अंतर्द्वन्द की स्थिति में होंगे, तौ क्या उपाय अपनाएंगे*
आज कक्षा में बच्चों को एक महत्वपूर्ण पाठ पढ़ा रहा था/रही थी, तभी प्रधानाचार्य ने मुझे तुरन्त किसी प्रशासनिक कार्य को करने को कह दिया।	
जब मैं बच्चों को खेल विधि से शिक्षण करवाता हूं तो अभिभावकों को लगता है कि बच्चे नहीं पढ़ रहे और इसकी शिकायत वे प्रधानाचार्य या पंचायत सदस्यों से करते हैं	
जब लोग यह कहते हैं कि हमारे विद्यालय में अच्छी पढ़ाई नहीं होती।	
जब आपको अपने विद्यालय में यह अनुभव होता है कि बच्चे किसी अन्य शिक्षक या शिक्षिका को अधित पसंद करते हैं और उन्हीं से पढ़ना चाहते हैं।	
जब विद्यालय पहुंचना जरूरी हो और आप किसी कारण से नहीं जा सकें।	

उपरोक्त सूची में जिस प्रकार के तनावों की चर्चा की गई है उनको केवल नाकारात्मक रूप से नहीं लिया जाना चाहिए। ये सभी स्थितियां शिक्षक के जीवन में आती रहती हैं और उनके समाधान के लिए शिक्षक जिस प्रकार के साकारात्मक उपायों को अपनाता है उससे उसकी अस्मिता का भी विकास होता है। उदाहरण के तौर पर निम्नलिखित उदाहरण को पढ़े।

विद्यालय की स्थिति का एक उदारहण

राजीव एक विद्यालय में नए–नए शिक्षक हुए हैं। विद्यालय में पहले से छः शिक्षक हैं जिनमें आपस में कई बातों पर मतभेद रहता है और वे सभी प्रधानाचार्य के विरूद्ध भी रहते हैं। ऐसा इसलिए क्योंकि प्रधानाचार्य सभी शिक्षकों को समय पर आने के लिए कहते हैं। चुंकि, राजीव एक ऐसे शिक्षक हैं जिनके पास शिक्षण एवं विद्यालय के अन्य कार्यों को संभालने का बहुत अच्छा कौशल है, इसके कारण प्रधानाचार्य उनकी बहुत तारीफ करते हैं और उनको कई प्रबंधात्मक कार्यों में भी जोड़ते हैं। जबकि, विद्यालय के अन्य शिक्षक राजीव को यह समझाते हैं कि प्रधानाचार्य अच्छे नहीं हैं इसलिए राजीव को उनकी मदद नहीं करनी चाहिए। इसके साथ ही, राजीव यह देखते हैं कि विद्यालय में शिक्षा का स्तर ठीक नहीं है क्योंकि कोई भी शिक्षक सही तरीके से नियमित तौर पर कक्षा में शिक्षण नहीं करते हैं। राजीव अन्य को समझाते हैं तो वे उलटे ही राजीव को नसीहत देते हैं कि उसे भी इसको बहुत गम्भीरता से नहीं लेना चाहिए। साथ ही राजीव पर दबाव बनाते हैं कि वह विद्यालय में बहुत सक्रिय होकर शिक्षण न करें क्योंकि इससे बच्चे और समुदायों की अपेक्षा बढ़ेगी, जिसके कारण अन्य शिक्षकों को परेशानी होगी।

ऐसी स्थिति में राजीव के मन में कई तनाव और अंतर्द्वन्द उत्पन्न होते हैं। एक तरफ वह सोंचते हैं कि उनको अपने सहकर्मी शिक्षकों के साथ अच्छा व्यवहार बनाकर रखना है क्योंकि उनके साथ ही राजीव को आगे लम्बे समय तक विद्यालय में शिक्षण करना है। इसके साथ ही, राजीव को यह भी लगता है कि उनका कहना गलत है और इसलिए उनका विरोध करना चाहिए। दूसरी तरफ, राजीव यह भी सोंचते हैं कि वे शिक्षक हैं अतः बच्चों को शिक्षण देना उनकी सबसे महत्वपूर्ण जिम्मेवारी है, इसलिए बिना किसी दबाव के उन्हें कक्षा में बहुत अच्छे तरीके से शिक्षण करना चाहिए।

उपरोक्त अंतर्द्वन्दों से निपटने के लिए, राजीव ने साकारात्मक उपाय अपनाया। शुरूआत में उन्होंने बच्चों को खुब अच्छी तरह से पढ़ाना शुरू किया फिर धीरे–धीरे अपने साथी शिक्षकों का दिल भी जीता। जबकि, कोई कक्षा खाली होती थी तो राजीव खुद ही उस शिक्षक के पास जाते थे और उनसे अनुमति लेकर उस कक्षा में पढ़ाते थे और साथ में अन्य शिक्षकों की बड़ाई भी बच्चों से करते थे। इसके साथ ही, राजीव ने प्रधानाचार्य द्वारा दिये जानेवाले कार्यों को भी करते रहे लेकिन तठस्थ भाव से, बिना अन्य शिक्षकों की शिकायत किए हुए। कधीरे–धीरे शिक्षकों को लगने लगा कि विद्यालय में शिक्षण का महौल अच्छा हो रहा है इसमें राजीव का बहुत बड़ा योगदान है। तब उन्होंने यह सोंचा कि जब एक शिक्षण इतना कुछ कर सकता है तो सभी मिलकर विद्यालय में बहुत बड़ा बदलाव ला सकते हैं। अतः वे राजीव को बहुत पसन्द करने लगे क्योंकि राजीव ने उनके नीचा नहीं दिखाया। अब जब भी विद्यालय में कुछ समस्या आती है तो सभी शिक्षक एक दूसरे की मदद करते हैं और शिक्षण में भी रूचि लेते हैं। प्रधानाचार्य ने भी अन्य शिक्षकों को उतना महत्व देना शुरू कर दिया जितना वे राजीव को दिया करते हैं।

अतः कई बार, विद्यालय में तनाव की स्थिति से शिक्षक अपने साकात्मक अस्मिता का विकास कर सकते हैं।

केगन के अनुसार, किसी भी व्यक्ति का विकास वैसे संदर्भ में सबसे बेहतर तरीके से होता है जहां उसे चुनौतियां एवं समर्थन, दोनो निरन्तर मिलते रहते हैं। ऐसा संदर्भ जो बिना किसी समर्थन की संभावना के अध्यापक के लिए बहुत बड़े चुनौतियों को खड़ा करता है, उसके अस्मिता विकास में घातक होता है। इससे अध्यापक विकासात्मक दृष्टिकोण के स्थान पर सुरक्षात्मक एवं संकीर्ण सोच अपना लेते हैं। उपरोक्त उदाहरण में आपने देखा कि राजीव के पास विद्यालय में शिक्षकों की तरफ से कई चुनौतियों थी लेकिन साथ में उसके पास प्रधानाचार्य एवं बच्चों समर्थन भी था।

साथ ही, वैसा संदर्भ जो अतिसहयोगी है और किसी प्रकार की चुनौती उत्पन्न नहीं करता है, उसमें अध्यापक को निष्क्रिय एवं गतिहीन होने का खतरा होता है। इन दोनों ही संदर्भों में जिस प्रकार का असंतुलन है उससे अध्यापक की अस्मिता में सम्बंधविच्छेद और निष्क्रियता आने का खतरा होता है। इसका अर्थ है कि यदि किसी विद्यालय में शिक्षक को किसी भी प्रकार को कोई तनाव नहीं होता है तो वह धीरे–धीरे बहुत ही सुस्त पड़ जाएगा और सक्रियता से यह उपाय नहीं करेगा कि उसे अपने शिक्षण में क्या बदलाव लाना है। उदाहरण के तौर पर, किसी विद्यालय में यदि कोई शिक्षक अपने शिक्षण कार्य को नहीं करता है और इसके लिए उसे कोई नहीं टोकता है तो इससे स्वयं उस शिक्षक की सबसे ज्यादा क्षति हो रही है क्योंकि चुनौतियों के अभाव में वह अपना समय को काट रहा होता है लेकिन एक शिक्षक की अस्मिता उसमें से समाप्त हो रही होती है।

इसके उलट, यदि सहयोग और चुनौती में संतुलन हो तो अध्यापक के अस्मिता का उत्तम विकास हो सकता है। अतः शिक्षक का तनाव प्रबंधन इस प्रकार का होना चाहिए कि वह अपेक्षित सहयोग के साथ चुनौतियों का सामना कर पाए।

गतिविधि

- आपके विद्यालय में तनाव एवं अंतर्द्वन्द की क्या स्थिति है और उसको उत्पन्न करनेवाले कौन–कौन से कारक हैं इसका अध्ययन करें।
- आप उन स्थितियों से कैसे निपटते हैं, इस विषय में भी लिखें ।

3.6 समेकन

इस तरह, प्रस्तुत इकाई में आपने अपने वृत्तिक विकास एंव अस्मिता से सम्बंधित संकल्पनाओं को समझा। यह इकाई इसलिए विशेष महत्व की है क्योंकि इससे आपको अपने विषय में बहुत कुछ समझने का मौका मिलेगा। वृतिक विकास के अंतर्गत आपने जाना कि यह एक सतत प्रक्रिया है जो केवल प्रशिक्षण के माध्यम से ही नहीं बल्कि शिक्षक के अपने विद्यालय के कार्यों के माध्यम से भी सम्वर्धित होती है। इसके साथ ही, आपने प्रशिक्षण के स्वरूपों को भी समझा। शिक्षक की अस्मिता को लेकर आपने कुछ गहन सिद्धांतों को पढ़ा। उन सिद्धांतों के संदर्भ में यह आवश्यक है कि आप उन्हें सदैव आजमाते रहें। शिक्षके के तनाव के विविध पक्षों को भी आपने समझा, जिससे विद्यालय में आपकों मदद मिलेगी।

3.7 मूल्यांकन के लिए प्रश्न

1. वर्तमान समय में शिक्षकों की भूमिका में बड़ा बदलाव आया है। कैसे?
2. सेवाकालीन प्रशिक्षण के माध्यम से शिक्षक वृत्तिक विकास में काफी सहायता मिलती है। कैसे?
3. शिक्षक वृत्तिक विकास शिक्षक की पेशागत दक्षता के संवर्धन में किस प्रकार सहायक है?
4. वृत्तिक विकास में सेवापूर्व प्रशिक्षण की भूमिका आप किस रूप में देखते हैं? वर्णन कीजिए।
5. शिक्षक की अस्मिता से क्या तात्पर्य है? स्पष्ट करें।
6. शिक्षक की अस्मिता पर क्या उसके व्यक्तिगत पृष्ठभूमि का प्रभाव पड़ता है? कैसे?
7. शिक्षक के विद्यालयी संदर्भ में तनावों का उत्पन्न होना स्वाभाविक है? क्या इनसे भी उसकी अस्मिता एवं वृत्ति का विकास होता है।

इकाई–4
शैक्षिक संस्थाएं, प्रशिक्षण केन्द्र व सरकारी योजनाओं की समीक्षात्मक समझ

4.1 परिचय
4.2 सीखने के उद्देश्य
4.3 पूर्वानुभव
4.4 शैक्षिक संस्थाए
4.4.1 राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद (NCERT), नई दिल्ली
4.4.2 राज्य शिक्षा शोध एवं प्रशिक्षण परिषद (SCERT)
4.4.3 बिहार विद्यालय परीक्षा समिति (BSEB) बिहार, पटना
4.4.4 केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड (CBSE), नई दिल्ली
4.4.5 राष्ट्रीय शैक्षिक योजना एवं प्रशासन विश्वविद्यालय (NUEPA), नई दिल्ली
4.4.6 राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद (NCTE), नई दिल्ली
4.4.7 यूनिसेफ व अन्य अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाएँ
4.5 शिक्षक प्रशिक्षण केन्द्र
4.5.1 जिला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान (DIET) एवं प्राथमिक शिक्षक शिक्षा महाविद्यालय (PTEC)
4.5.2 जिला संसाधन केन्द्र (DRC), प्रखण्ड संसाधन केन्द्र (BRC) एवं संकुल संसाधन केन्द्र (CRC)
4.6 शैक्षिक योजनायें
4.6.1 सर्व शिक्षा अभियान (SSA)
4.6.2 राष्ट्रीय माध्यमिक शिक्षा अभियान (RMSA)
4.6.3 बिहार शिक्षा परियोजना (BEP)
4.7 समेकन
4.8 मूल्यांकन के लिए प्रश्न

4.1 परिचय

देश भर में कई ऐसी शैक्षिक संस्थाएँ हैं जो विद्यालयी शिक्षा को प्रभावित करने वाली नीतियां एवं मार्गदर्शक दस्तावेज तैयार करती है। इनके अतिरिक्त राज्यों में भी शिक्षा संबंधी नीतियों के निर्माण एवं क्रियान्वयन हेतु कई संस्थाएँ कार्यरत हैं। उपरोक्त संस्थाओं की नीतियाँ एवं दिशा निर्देश विद्यालयों के संचालन एवं प्रबंधन में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। विद्यालय की समस्त प्रक्रियाओं के माध्यम से नीतियों के समावेश में शिक्षक की अहम भूमिका होती है। इन प्रक्रियाओं के लिए शिक्षक समन्वयक एवं अनुपालक की भूमिका निभाते है। अतः उनके लिए इन संस्थाओं के विषय में जानकारी होना आवश्यक है। विद्यालय के विकास हेतु बच्चों को केन्द्र में रखकर सरकारी योजनाएँ बनाई जाती है, जिनका कार्यान्वयन शिक्षक के माध्यम से एवं शिक्षक के द्वारा होता है, इसलिए शिक्षक को इन योजनाओं के संबंध में समझ एवं कार्यान्वयन में तत्परता रखनी चाहिए।

4.2 सीखने के उद्देश्य

- केन्द्रीय, राज्यीय एवं स्थानीय स्तर के प्रमुख शैक्षिक संस्थाओं से अवगत होना।
- उन संस्थाओं के प्रमुख कार्यों को विद्यालय एवं शिक्षक के संदर्भ में समझना।
- कुछ प्रमुख शैक्षिक योजनाओं के विषय में समझ बनाना।

4.3 पूर्व अनुभव

इस इकाई में चर्चा किए जानेवाले कुछ संस्थाओं, प्रशिक्षण केन्द्रों तथा योजनाओं से आप पहले से परिचित होंगे। राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद (NCERT), राज्य शिक्षा शोध एवं प्रशिक्षण परिषद (SCERT), बिहार विद्यालय परीक्षा समिति (BSEB), केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड (CBSE) आदि संस्थाओं का नाम आपने अपने अध्ययन के समय भी सुना होगा। जहां, किताबों की बात आती होगी वहां आपने राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद (NCERT), राज्य शिक्षा शोध एवं प्रशिक्षण परिषद (SCERT) द्वारा निर्मित किताबों को पढ़ा होगा। दसवीं और बारहवीं की बोर्ड परीक्षा में आपने बिहार विद्यालय परीक्षा समिति (BSEB), केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड (CBSE) का नाम सुना होगा। यह सम्भव है कि आपका प्रमाणपत्र भी इनमें से किसी बोर्ड द्वारा जारी किया गया हो। इसी के साथ, अभी आप विद्यालय में शिक्षण कर रहे हैं तो प्रखण्ड संसाधन केन्द्र (BRC) एवं संकुल संसाधन केन्द्र (CRC) के बारे में जरूर पता होगा। कई शैक्षिक योजनाएं जैसे कि सर्व शिक्षा अभियान के विषय में भी आपको जानकारी होगी।

4.4 शैक्षिक संस्थाएं

किसी विद्यालय की शैक्षिक प्रक्रिया में बहुत सारी संस्थाओं का परोक्ष योगदान होता है। विद्यालय के अकादमिक एवं प्रबंधात्मक कार्यों में उन संस्थाओं की भूमिका अहम होती है। उदाहरण के तौर पर जहां बिहार के विद्यालयों की पाठ्यचर्या को निर्मित करने में राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद (NCERT), नई दिल्ली तथा राज्य शिक्षा शोध एवं प्रशिक्षण परिषद (SCERT) बिहार, पटना जैसी संस्थाओं की भूमिका है। वहीं, विद्यालयों को मान्यता देने तथा उनकी परीक्षाओं को लेने तथा प्रमाणित करने का दायित्व बिहार विद्यालय परीक्षा समिति (BSEB) बिहार, पटना या केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड (CBSE), नई दिल्ली जैसी संस्थाओं को है। उसी तरह, जब विद्यालय के लिए शिक्षक तैयार करने की बात आती है तो उसमें राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद (NCTE), नई दिल्ली जैसी संस्थाओं की भूमिका किसी न किसी रूप में अवश्य होती है। इसके साथ ही, कई अन्य अर्न्तराष्ट्रीय संस्थाएँ भी विद्यालय और शिक्षक को प्रभावित करती हैं। इन सब के परिचयात्मक विवरण तथा कुछ प्रमुख कार्यों का विश्लेषण इस भाग में किया गया है ताकि प्रशिक्षु अपने संदर्भ में उन संस्थाओं की भूमिका को समझ सकें।

4.4.1 राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद्

भारत सरकार ने 1961 में राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद् (National Council of Educational Research and Training) की एक स्वायत संगठन के रूप में स्थापित किया। ताकि शिक्षा से संबंधित नीतियों को लागू करने विशेषतः स्कूली शिक्षा और शिक्षकों की तत्परता में गुणात्मक परिवर्तन लाने

के लिए केन्द्र व राज्य सरकारों को परामर्श और सहायता प्रदान की जा सके। कालान्तर में परिषद् ने एक विशिष्ट संगठन का रूप ले लिया है जिसकी निरन्तरशील गतिविधियों ने भारत में स्कूली शिक्षा को प्रभावित किया है। इस परिषद् का प्रमुख ध्येय विद्यालयी शिक्षा में गुणात्मक सुधार करना है। इसका मुख्यालय नई दिल्ली में हैं। विद्यालयी शिक्षा के सुधार के कार्यक्रमों तथा नीतियों को बनाने और उनका बेहतर कार्यान्वयन करने के संबन्ध में भारत सरकार के मानव संसाधन एवं विकास मंत्रालय के स्कूली शिक्षा विभाग को अकादमिक परामर्श देना इस परिषद् का प्रमुख कार्य है। स्कूली शिक्षा में शोध एवं प्रशिक्षण हेतु बेहतर समन्वय एवं कार्यान्वयन हेतु परिषद् की निम्न प्रमुख संघटक इकाईयाँ हैं।

- ❖ राष्ट्रीय शिक्षा संस्था (एन. आई. टी.)
- ❖ केंद्रीय शैक्षिक प्रौद्योगिकी संस्थान (सी. आई. ई. टी.)
- ❖ क्षेत्रीय शिक्षा महाविद्यालय

<u>संस्था के प्रमुख कार्य–</u>

संस्था द्वारा विद्यालयी शिक्षा के गुणात्मक विकास के संदर्भ में निम्न विषयों पर विशेष रूप से ध्यान दिया जाता है–

- शिक्षा की सभी शाखाओं में अनुसंधान करने, उसे सहायता देने, बढ़ावा देने तथा उनमें समन्वय स्थापित करना।
- पूर्ण–सेवा तथा सेवाकालीन शिक्षक प्रशिक्षण की व्यवस्था करना।
- शैक्षिक अनुसंधान, शिक्षक प्रशिक्षण एवं विद्यालयों के लिए विस्तार सेवाओं में संलग्न संस्थाओं हेतु विस्तार सेवाएँ उपलब्ध करवाना।
- शैक्षिक तकनीकों एवं शिक्षायी प्रक्रियाओं में नवाचारों को विकसित करना तथा उनका प्रसार करने का दायित्व
- राज्य स्तर के शिक्षा विभागों विश्वविद्यालयों तथा अन्य शैक्षणिक संस्थानों को उनके उद्देश्यों को पूरा करने हेतु सहयोग देना। साथ ही देश के विभिन्न हिस्सों में ऐसे संस्थान खोलना।
- राज्य सरकारों तथा अन्य शैक्षिक संगठनों व संस्थाओं को विद्यालयी शिक्षा से संबंधित मुद्दो पर सलाह देना।
- औपचारिक एवं अनौपचारिक शिक्षा तंत्रों के बच्चों की शैक्षिक आवश्यकताओं को पूरा करना।
- स्कूली शिक्षा हेतु पाठ्यक्रम का विकास करना, पाठ्यपुस्तकें तैयार करना, प्रकाशित करना एवं उनका मूल्यांकन करना।
- पुस्तकों के छात्र–संस्करण एवं अध्यापक संस्करण तैयार करना।
- विद्यालयी परीक्षाओं में सुधार करना।

संस्था के अंतर्गत क्षेत्रीय शिक्षा महाविद्‌यालयों

माध्यमिक शिक्षा आयोग (1952–53) द्वारा सुझाए गए बहु–उद्देश्यीय विद्यालयों में विज्ञान, तकनीकी शिक्षा, वाणिज्य, ललित कला, गृह विज्ञान, कृषि आदि विषयों के शिक्षक तैयार करने के उद्देश्य से राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद् द्वारा देश में विभिन्न क्षेत्रीय शिक्षा महाविद्‌यालयों की स्थापना की।

- क्षेत्रीय शिक्षा महाविद्यालय–अजमेर
- क्षेत्रीय शिक्षा महाविद्यालय–भोपाल
- क्षेत्रीय शिक्षा महाविद्यालय–भुवनेश्वर
- क्षेत्रीय शिक्षा महाविद्यालय–मैसूर
- उ.पू. क्षेत्रीय शिक्षा महाविद्यालय–शिलांग

इन महाविद्यालयों के प्रमुख उद्देश्य एवं कार्य आगे हैं–

1. अध्यापकों के लिए सेवाकालीन पाठ्‌यक्रम का संचालन।
2. संबंधित प्रदेश के शिक्षकों, निरीक्षकों एवं प्रशासनिक अधिकारियों के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम संचालित करना।
3. विद्‌यालयी शिक्षा एवं शिक्षण विधियों और पाठ्‌यक्रमों के संबंध में शोध करना।
4. चार वर्षीय संयुक्त बी. एड. पाठ्‌यक्रम का संचालन।
5. दो वर्ष का ग्रीष्मकालीन तथा पत्राचार पाठ्‌यक्रम का संचालन।

राष्ट्रीय शैक्षिक, अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् द्वारा दृश्य–श्रव्य साधन, शिक्षात्मक और व्यावसायिक मार्गदर्शन, मूल्यांकन, शोधविधि, समाज शिक्षा, शिक्षा आदि विषयों में विशिष्ट प्रशिक्षण की व्यवस्था की जाती है। इन पाठ्‌यक्रमों की अवधि तीन माह से एक वर्ष तक होती है।

उपरोक्त सभी प्रयास अध्यापक शिक्षा के क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण रहे हैं, जिसके कारण स्कूली शिक्षा एवं शिक्षक शिक्षा दोनों ही क्षेत्र प्रांतीय स्तर पर विभिन्न सामाजिक शैक्षिक आवश्यकताओं की पूर्ति का साधन बन सके। विद्यालय के बच्चों तथा शिक्षकों के लिए परिषद् राष्ट्रीय एकीकरण एवं सद्‌भावना विकास हेतु समय–समय पर एकता शिविर भी आयोजित करती है। विज्ञान के विकास हेतु 'पोर्टेबिल लेब', 'साईंस किट', 'मैथ किट', 'इलेक्ट्रोनिक किट' इत्यादि के विकास के अलावा परिषद् राज्य एवं राष्ट्रीय स्तर पर विज्ञान प्रदर्शनी एवं राष्ट्रीय प्रतिभा खोज परीक्षा भी आयोजित करती है। बालिका, वंचित एवं गरीब बच्चों के लिए विभिन्न छात्रवृत्तियों की सुविधा भी परिषद द्वारा मुहैया कराई जाती है।

<u>एन. सी. ई. आर. टी. : प्रमुख पत्रिकाएँ</u>

- इंडियन एजुकेशन रिव्यु
- जर्नल ऑन इंडियन एजुकेशन
- स्कूल सांइस
- प्राथमिक शिक्षक

विद्यालयी शिक्षा में शोध को बढ़ावा देने के लिए अभी हाल ही में परिषद द्वारा शोध छात्रवृत्ति भी प्रदान की जा रही है। परिषद् द्वारा सन् 1973 में स्थापित शैक्षिक प्रौद्योगिकी केंद्र, (वर्तमान में केंद्रीय शैक्षिक प्रौद्योगिकी संस्थान) शिक्षा में प्रौद्योगिकी के विकास एवं उपयोग हेतु विभिन्न कार्यक्रम का आयोजन तथा प्रशिक्षण सामग्रियों का विकास किया जाता रहा है। उपग्रह–दूरदर्शन, रेडियों, कम्प्यूटर इत्यादि पर विभिन्न कार्यक्रम इसी केंद्र द्वारा संचालित होते है।

गतिविधि

- उपरोक्त विवरण में कई ऐसे बिन्दुओं की चर्चा की गई है जिससे आपको अपने वृतिक विकास में मदद मिल सकती है। उनको पहचाने और सूचीबद्ध करें।
- साथ ही इस संस्था के वेबसाइट **www.ncert.nic.in** पर जाकर भी इसे अन्य कार्यों का पता लगाएं जो आपके काम आ सके और अध्ययन केन्द्र पर इसकी चर्चा करें

4.4.2 राज्य शिक्षा शोध एवं प्रशिक्षण परिषद्

राज्य शिक्षा शोध एवं प्रशिक्षण परिषद् (State Council of Educational Research and Training) की स्थापना विभिन्न राज्यों में विद्यालयी शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार लाने हेतु की गई थी। राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) व इसकी कार्ययोजना (1992) में राज्य स्तर के उत्कृष्ठ शैक्षिक संगठनों की परिकल्पना की गई थी ताकि वे राज्य स्तर पर नोडल ऐजेंसी का काम करे।

हर प्रांत में शिक्षा विभाग की राज्य स्तरीय संस्थायें शिक्षा में गुणात्मक सुधार लाने के लिए सतत् प्रयत्नशील हैं जिनमें अग्रणी है– राज्य शिक्षा शोध एवं प्रशिक्षण परिषद्। शैक्षिक विकास की दौड़ में राज्य को पुनः स्थापित करने, स्कूली शिक्षा को ठोस आधार एवं स्वरूप प्रदान करने और विद्यार्थियों के भविष्य को बेहतर बनाने हेतु क्रियाशीलनों एवं नवाचार गतिविधियों के माध्यम से बहु आयामी कार्यक्रमों का सम्पादन परिषद द्वारा सतत् रूप से किया जाता है।

अनुसंधान और प्रशिक्षण निदेशालय, बिहार स्कूली शिक्षा में शैक्षिक नेतृत्व प्रदान करने के उद्देश्य से काम कर रही है, ताकि राज्य में प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार के लिए हर संभव प्रयास किया जा सके। निदेशालय राज्य के सभी शिक्षक–प्रशिक्षण संस्थानों के समग्र प्रबंधन, पर्यवेक्षण और निगरानी के लिए जिम्मेदार है। यह निदेशालय राज्य में शिक्षक और शैक्षणिक व्यावसायिकता प्रदान कराने वाले संस्थानों का नियंत्रण करता है जो सीधे बच्चों को गुणवत्तापूर्ण प्रशिक्षण और शिक्षा प्रदान करने के लिए जिम्मेदार है। वर्तमान में राज्य में 17 स्वायत्त अनुसंधान संस्थान हैं, जो इस निदेशालय के अंतर्गत आते हैं।

पाठ्यक्रम व पाठ्यपुस्तक में संशोधन, अनुसंधान और शिक्षक प्रशिक्षण, एडुसैट के माध्यम से शैक्षिक प्रौद्योगिकी का अवतरण, मूल्यांकन तथा स्कूली व व्यावसायिक शिक्षा का मार्गदर्शन और परामर्श, प्रलेखन, प्रचार व प्रसार, सभी स्तरों के लिए संबंधित अध्ययन सामग्री का प्रकाशन आदि सभी कार्य इस निदेशालय के दायरे में आते हैं।

शिक्षकों को शिक्षण की नवीनतम विधाओं से अवगत कराने, उनमें शिक्षण संबंधी दक्षता की वृद्धि और विकास के लिए समुचित शैक्षिक सामग्री और विकास के अवसर इस परिषद द्वारा उपलब्ध कराये जाते हैं। इन परिषदों द्वारा राज्य में संचालित सेवापूर्व व सेवारत शिक्षक–प्रशिक्षण के विभिन्न पाठ्यक्रमों का निर्माण तथा डायट्स/प्राथमिक शिक्षक शिक्षा महाविद्यालय के माध्यम से शिक्षकों, प्राचार्यों एवं व्याख्याताओं के प्रशिक्षण भी आयोजित किए जाते हैं।

परिषद के प्रमुख उद्देश्य एवं कार्य–

- विभिन्न प्रकार के शैक्षिक अनुसन्धान आयोजित करके शिक्षा की गुणवत्ता को बढ़ाना।
- शिक्षक शिक्षा में सुधार करना।
- शैक्षिक संस्थानों की गुणवत्ता को बढ़ाने के लिए शिक्षा पद्यति को अपग्रेड करना।
- शैक्षिक नवाचारों के लिए प्रचार करना।

राज्य शिक्षा शोध एवं प्रशिक्षण परिषद की मुख्य भूमिका तथा कार्य गुणवत्ता के सन्दर्भ में निम्न है

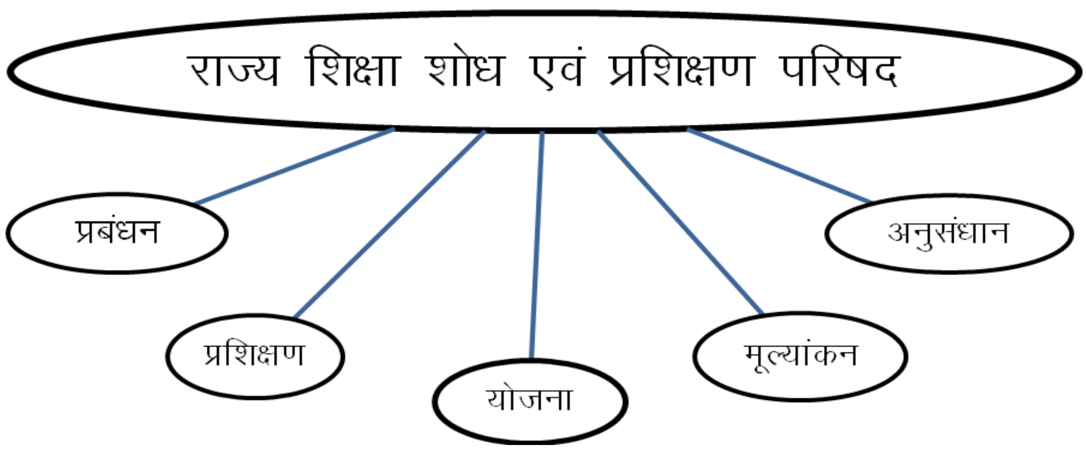

परिषद् के मुख्य कार्य निम्न हैं :

- स्कूल शिक्षा, सतत् शिक्षा, अनौपचारिक शिक्षा और विशेष शिक्षा में सुधार करना।
- पूर्व–प्राथमिक शिक्षा से लेकर माध्यमिक शिक्षा में निरीक्षकों को प्रशिक्षण देना।
- पूर्व प्राथमिक शिक्षा से लेकर माध्यमिक शिक्षा में शिक्षकों को सेवा प्रशिक्षण प्रदान करना (पूर्व सेवा तथा सेवा कालीन प्रशिक्षण)
- शिक्षक प्रशिक्षण संस्थानों को विस्तार सेवा प्रदान करना तथा उनमें तालमेल बनाये रखना।
- शैक्षिक संस्थानों के लिए शिक्षण सामग्री तैयार करना।
- शिक्षकों को विषय वस्तु तथा शिक्षण विधि में अनुसन्धान करने हेतु प्रोत्साहित करना।

गतिविधि

- उपरोक्त विवरण में कई ऐसे बिन्दुओं की चर्चा की गई है जिससे आपको अपने वृतिक विकास में मदद मिल सकती है। उनको पहचाने और सूचीबद्ध करें।
- साथ ही इस संस्था के वेबसाइट पर जाकर भी इसे अन्य कार्यों का पता लगाएं जो आपके काम आ सके और अध्ययन केन्द्र पर इसकी चर्चा करें

4.4.3 बिहार विद्यालय परीक्षा समिति (BSEB) बिहार, पटना

बिहार विद्यालय परीक्षा समिति एक ऐसी राज्य स्तरीय संस्था है जो राज्य के विद्यालयों को मान्यता प्रदान करती है तथा माध्ममिक स्तर की परीक्षाओं का आयोजन करती है। परीक्षाओं के आधार पर आए नतीजों को वह प्रमाणित करती है। आपमें से कई प्रशिक्षु ने इस बोर्ड से ही अपनी दसवीं की परीक्षा पास की होगी। इसके साथ ही, आप अभी जिस डी.एल.एड. कार्यक्रम को कर रहे हैं, उसकी परीक्षाओं को भी इस बोर्ड के माध्यम से ही कराया जा रहा है और साथ ही यह बोर्ड ही आपको प्रमाणपत्र जारी करेगी। यह संस्था पटना में हैं और वहीं से पूरे बिहार में परीक्षा तंत्र को प्रबंधित करती है।

गतिविधि

- आप इस संस्था के वेबसाइट **www.biharboard.ac.in** पर जाकर इसके अन्य कार्यों का पता लगाएं जो आपके काम आ सके और अध्ययन केन्द्र पर इसकी चर्चा करें।
- इस संस्था के प्रबंधात्मक संरचना का भी पता लगाएं।
- इस संस्था के कार्यों का आपके विद्यालय पर क्या कोई प्रभाव पड़ता है इसका विश्लेषण करें।

4.4.4 केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड (CBSE), नई दिल्ली

उपरोक्त 4.4.3 में वर्णित संस्था के कार्यों से ही मिलाजुला कार्य केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड का भी है। यह एक राष्ट्रीय स्तर की संस्था है जिसका मुख्यालय दिल्ली में है। इस बोर्ड से मान्यताप्राप्त विद्यालय पूरे देश में फले हुए हैं। यह उनकी दसवी और बारहवीं की परीक्षा को आयोजित करती है तथा प्रमाण पत्र देती है। आपने अपने आस–पास कुछ ऐसे विद्यालयों को देख सकते हैं जो इस बोर्ड से मान्यताप्राप्त होंगे। अधिकतर नीजी विद्यालय इसी बोर्ड के अंतर्गत हैं। केन्द्र सरकार के द्वारा चलाए जानेवाले केन्द्रीय विद्यालय, नवोदय विद्यालय, आदि में भी इसी बोर्ड से परीक्षा ली जाती है।

गतिविधि

- आप इस संस्था के वेबसाइट **www.cbse.nic.in** पर जाकर इसके अन्य कार्यों का पता लगाएं जो आपके काम आ सके और उपको सूचीबद्ध करके अध्ययन केन्द्र पर इसकी चर्चा करें।
- इस संस्था के प्रबंधात्मक संरचना का भी पता लगाएं।
- बिहार विद्यालय परीक्षा समिति और केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड में क्या समानताएं और अंतर है इसपर अपने अध्ययन केन्द्र पर परिचर्चा का आयोजन करें।

4.4.5 राष्ट्रीय शैक्षिक योजना एवं प्रशासन विश्वविद्यालय (न्यूपा)

राष्ट्रीय शैक्षिक योजना एवं प्रशासन विश्वविद्यालय (National University of Educational Planning and Administration) शैक्षिक योजना और प्रशासन के क्षेत्र में मानव संसाधन एवं विकास मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा स्थापित एक केंद्रीय संस्थान है जो भारत ही नहीं बल्कि दक्षिणी एशिया का प्रमुख संगठन है, जो शैक्षिक योजना एवं प्रबंधन के क्षेत्र में क्षमता विकास और शोध कार्य में संलग्न है। शैक्षिक योजना एवं प्रशासन के क्षेत्र में इसके द्वारा किए जा रहे कार्यों को देखते हुए भारत सरकार ने अगस्त 2006 में इसका उन्नयन करके मानद् विश्वविद्यालय का दर्जा प्रदान किया ताकि यह स्वयं उपाधि प्रदान कर सके।

अन्य केन्द्रीय विश्वविद्यालयों के समान न्यूपा भारत सरकार द्वारा पूर्णतः वित्तपोषित स्वायत्त संस्थान है। आरंभ में न्यूपा की स्थापना 1962 में एशिया तथा प्रशांत क्षेत्र के शैक्षिक योजनाकारों, प्रशिक्षकों एवं पर्यवेक्षकों के प्रशिक्षण हेतु एशिया क्षेत्र के यूनेस्को केन्द्र के रूप में की गई थी। जिसे 1965 में एशियाई शैक्षिक योजना एवं प्रशासन संस्थान बना दिया गया। इसके चार साल बाद भारत सरकार ने इसका अधिग्रहण कर लिया और इसका नाम राष्ट्रीय शैक्षिक योजनाकार एवं प्रशासक कॉलेज रख दिया गया। राष्ट्रीय शैक्षिक योजनाकार एवं प्रशासक कॉलेज की बढ़ती भूमिकाओं और कार्यकलापों विशेषकर क्षमता विकास, शोध और सरकार को दी जा रही व्यावसायिक समर्थनकारी सेवाओं को ध्यान में रखते हुए 1979 में पुनः इसका नाम बदलकर राष्ट्रीय शैक्षिक योजना एवं प्रशासन संस्थान (नीपा) कर दिया गया।

संस्था के प्रमुख कार्य–

न्यूपा निम्नलिखित प्रमुख प्रकार के कार्य करती हैः–

- प्रशिक्षण
- अनुसंधान
- नवाचार
- सुझाव / परामर्श सेवा
- प्रकाशन
- सहयोग

प्रशिक्षण –

- शैक्षिक नियोजन एवं प्रबंधन / प्रशासन से संबंधित सेमिनार कार्यशाला तथा प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित करना
- एशिया क्षेत्र के भारतीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय व्यक्तियों हेतु प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित करना।

अनुसंधान –

- शैक्षिक नियोजन एवं प्रशासन में अनुसंधान करना
- संस्थान के अनुसंधान परिणामों को प्रशिक्षण कार्यक्रमों के साथ जोड़ना (परिणामों का अनुप्रयोग करना)
- नीति बनाने व नीति मूल्याकंन हेतु सर्वेक्षण, विश्लेषण अध्ययन व अनुसंधान परियोजनाएँ करवाना।

नवाचार –

- शैक्षिक नियोजन एवं प्रशासन के संदर्भ में नवीन प्रयोग करना व नवाचारी विधियों का प्रयोग करना जैसे 'School Complex', एवं स्कूल लीडरशिप इत्यादि।
- शैक्षिक नियोजकों एवं प्रशासकों को नवाचारी मुद्दों एवं विधियों से अभिविन्यासित करना।
- विभिन्न राज्यों में शैक्षिक भ्रमण आयोजित करना, जिससे उनमें अपनाई जाने वाले नवाचारी क्रियाकलापों से नियोजकों, प्रशासकों, विद्यालय मुख्याध्यापकों इत्यादि को अवगत करवाया जा सके।

परामर्श सेवा –

- राज्यों व केन्द्र शासित प्रदेशों को विद्यालय, महाविद्यालय एवं विश्वविद्यालय स्तर के नियोजन एवं प्रशासन संबंधी परामर्श सेवा प्रदान करना।
- केन्द्र सरकार को समय–समय पर विभिन्न मुद्दों जैसे नियोजन एवं प्रशासन का विकेन्द्रीकरण, प्रारंभिक शिक्षा का सार्वजनीकरण, वयस्क शिक्षा, शैक्षिक कार्यक्रमों की जाँच एवं मूल्यांकन आदि पर सलाह एवं मार्गदर्शन करना।

प्रकाशन –

- शैक्षिक नियोजन एवं प्रशासन संबंधी विभिन्न प्रकार के शैक्षिक एवं अनुसंधान परक प्रकाशन करना।
- विद्यालयी शिक्षा व उच्च शिक्षा से संबंधित विभिन्न जर्नल, शोध पत्र, अध्ययन प्रतिवेदन, संदर्भ पत्र इत्यादि प्रकाशित करना।

सहयोग –

- विभिन्न राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों जैसे विश्वविद्यालय अनुदान आयोग, राष्ट्रीय शैक्षिक, अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद् केंद्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, भारतीय वैज्ञानिक अनुसंधान परिषद, यूनेस्को इत्यादि संगठनों के विषय–विशेषज्ञों एवं संसाधन व्यक्तियों का प्रशिक्षण एवं अनुसंधान में पूर्ण सहायता करना।
- शिक्षा में गुणात्मक एवं मात्रात्मक विकास हेतु न्यूपा के शिक्षकों एवं अन्य संगठनों के शिक्षकों/सदस्यों के बीच अन्तर्क्रिया को बढ़ावा देना।

गतिविधि

- उपरोक्त विवरण में कई ऐसे बिन्दुओं की चर्चा की गई है जिससे आपको अपने वृतिक विकास में मदद मिल सकती है। उनको पहचाने और सूचीबद्ध करें।
- साथ ही इस संस्था के वेबसाइट **www.nuepa.org** पर जाकर भी इसे अन्य कार्यों का पता लगाएं जो आपके काम आ सके और अध्ययन केन्द्र पर इसकी चर्चा करें

4.4.6 राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद (एन.सी.टी.ई.)

देश में अध्यापकों का प्रशिक्षण समुचित ढंग से हो सके इसकी जिम्मेदारी राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद (National Council for Teacher Education) के ऊपर है। इस संबंध में सैद्धान्तिक एवं व्यावहारिक रूपरेखा तैयार करने की जिम्मेदारी भी इसी संस्थान का उत्तरदायित्व है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) में यह निर्देशित है कि राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद् शिक्षक–शिक्षा को प्रत्यापित करने, पाठ्यचर्या एवं पद्धतियों के बारे में दिशा–निर्देश प्रदान करने के लिए जरूरी संसाधन एवं क्षमता उपलब्ध करवाने का कार्य करेगी। राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद् शिक्षक–शिक्षा प्रणाली के मार्गदर्शन को सक्षम बनाने के लिए राष्ट्रीय शिक्षा नीति के कार्यान्वयन के लिए सन् 1986 में तैयार की गई कार्य योजना (Plan of Action) में इसे संवैधानिक दर्जा प्रदान करने की परिकल्पना की गई। इस अनुपालना में संवैधानिक दर्जा प्रदान करने के लिए सन् 1993 में एक अधिनियम बनाया गया। यह अधिनियम राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद् अधिनियम–1993 के नाम से पुकारा जाता है। इस परिषद् का मुख्यालय नई दिल्ली में स्थापित किया गया है। इस अधिनियम ने परिषद को यह भी अधिकार प्रदान किया कि यह अपना क्षेत्रीय कार्यालय स्थापित कर सकती है। फिलहाल परिषद के 4 क्षेत्रीय कार्यालय हैं।

केंद्रीय मुख्यालय–नई दिल्ली
उ. क्षे. कार्यालय–जयपुर
म. क्षे. कार्यालय–भोपाल
पू. क्षे. कार्यालय–भुवनेश्वर
द. क्षे. कार्यालय–बंगलौर

परिषद् के कार्यः–

अधिनियम द्वारा परिषद् के निम्नलिखित प्रमुख कार्य निर्धारित किए गए हैंः–

- देश में अध्यापक–शिक्षा का विकास, नियन्त्रण एवं समन्वय करना।
- स्वीकृत संस्थाओं की जवाबदेही के लिए मानदण्ड तथा मूल्यांकन पद्धति का निर्धारण करना।
- अध्यापक–शिक्षा के विभिन्न पक्षों से सम्बन्धित सर्वेक्षण तथा अध्ययन करना। शिक्षकों की माँग एवं आपूर्ति के बीच के अंतर को कम करना।
- शिक्षक की नियुक्ति, ट्यूशन, फीस आदि के सम्बन्ध में मार्ग–निर्देश प्रदान करना।
- अध्यापक–शिक्षा के क्षेत्र में विभिन्न उपयुक्त कार्यक्रमों की केन्द्र एवं राज्य सरकारों, विश्वविद्यालय अनुदान आयोग एवं स्वीकृत संस्थाओं को संस्तुति करना।
- अध्यापक–शिक्षा के बाजारीकरण/व्यावसायीकरण (CommercialÁation) को रोकने के लिए जरूरी कदम उठाना।
- शिक्षक विकास कार्यक्रमों के लिए नवीन संस्थाओं की स्थापना करना।
- अध्यापक शिक्षा के विभिन्न पाठ्यक्रमों के लिए प्रवेश नियमों, अभ्यार्थियों की चयन–प्रक्रिया, पाठ्यक्रम की अवधि का निर्धारण, पाठ्यक्रम की विषय–वस्तु आदि का निर्धारण करना।
- अध्यापक–शिक्षा संस्थाओं की स्वीकृति एवम् संबंधीकरण से संबंधित नियमों का निर्धारण करना।
- अध्यापक शिक्षा की प्राथमिकताओं, नीतियों, योजनाओं एवं कार्यक्रमों से संबंधित मामलों में केन्द्र सरकार, राज्य सरकार, विश्वविद्यालय अनुदान आयोग और अन्य एजेंसियों को सलाह देना।

गतिविधि

- उपरोक्त विवरण में कई ऐसे बिन्दुओं की चर्चा की गई है जिससे आपको अपने वृतिक विकास में मदद मिल सकती है। उनको पहचाने और सूचीबद्ध करें।
- साथ ही इस संस्था के वेबसाइट **www.ncte-india.org** पर जाकर भी इसे अन्य कार्यों का पता लगाएं जो आपक

4.4.7 यूनिसेफ व अन्य अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाएँ

पिछले कुछ वर्षों में स्वैच्छिक संगठन, सरकारी क्षेत्र के सामाजिक विकास के क्षेत्र में किये जाने वाले प्रयासों के विकल्प के तौर पर एक महत्वपूर्ण घटक के रूप में सामने आये है। अनेक विकास कार्यक्रमों में स्वैच्छिक संगठनों की भूमिका महत्वपूर्ण रही है। कुछ प्रभावशाली स्वैच्छिक संगठनों की शक्ति इस बात में निहित है कि वे दूर–दराज के क्षेत्र में वंचित एवं दलित वर्गों के साथ कार्य करने को इच्छुक रहते है। इन समुदायों की आवश्यकताओं की पहचान करने में भागीदारी प्रक्रिया को बढ़ावा देते है। सरकारी क्षेत्र को दूर–दराज के तथा आरक्षित वर्गों तक पहुँचाने में स्वैच्छिक संगठनों ने अत्यधिक सहायता पहुँचाई है। स्वैच्छिक संगठन अपनी भूमिका/योगदान को उन जगहों पर देखते एवं केंद्रित करते हैं, जहाँ सरकारी क्षेत्र ने अपना योगदान नहीं दिया है या जिन क्षेत्रों तक वह पहुँच नही पाया है। सरकारी क्षेत्र शिक्षा सुविधाओं की उपलब्धता तथा आपूर्ति के पक्ष पर कार्य कर रहा है, जबकि स्वैच्छिक संगठनों ने समुदायों के साथ अपने कार्य के द्वारा उनकी शैक्षिक अपेक्षाओं और शैक्षिक मांग पर भी कार्य किया है। अधिकतर स्वैच्छिक संगठन शिक्षा के क्षेत्र में स्वयं को शिक्षण अधिगम हेतु अनुकूल वातावरण तैयार करने में सहायक भूमिका के तौर पर देखते है। स्वैच्छिक संगठनों के प्रमुख कार्य क्षेत्र निम्न प्रकार है–

- जो बच्चे विद्यालय नहीं जाते उनको औपचारिक शिक्षा के अंतर्गत लाने के लिए काम करना।
- साक्षरता कार्यक्रम का संचालन
- शिक्षण–अधिगम सामग्री का विकास एवं शोध
- समुदायों का सशक्तिकरण विशेषतः बालिका, वंचित एवं दलित वर्गों के सम्बन्ध में
- शिक्षण प्रशिक्षण कार्यक्रम
- विद्यालय छोड़ने की दर को घटाना एवं 'बालक–बालिका अंतराल' को कम करना
- मिड–डे मील योजना में सहयोग
- विद्यालय की आधारभूत संरचना/सुविधाओं में सुधार करना
- ब्रिज कोर्स की व्यवस्था करना, व्यावसायिक पाठ्यक्रमों का संचालन
- ग्राम शिक्षा समिति व विद्यालय प्रबन्धन को समिति बनाने में मदद करना तथा सदस्यों का अनुस्थापन/अभिविन्यास करना

गैर–सरकारी संगठन, नागरिक समाज समूह और शिक्षक संगठनों की भूमिका

पिछले दशक की एक उल्लेखनीय घटना रही है शिक्षा से गैर–सरकारी संगठनों और नागरिक समाज समूह का बड़े पैमाने पर जुड़ाव। गैर–सरकारी संगठनों ने स्कूली शिक्षा के नवाचारी मॉडलों की रचना में, शिक्षक–प्रशिक्षण, पाठ्यपुस्तकों एवं पाठ्य–सामग्री के निर्माण में तथा समुदाय में प्रचार–प्रसार करने में बड़ी भूमिका निभाई है। स्कूलों से उनका औपचारिक जुड़ाव पाठ्यचर्या विकास, अकादमिक सहयोग, निरीक्षण और शोध के लिए अत्यावश्यक है। नागरिक समूहों ने शिक्षा को सार्वजनिक जीवन में रोशनी लाने और बच्चों के अधिकारों को लेकर राय बनाने में भारी भूमिका निभाई है। राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा के दृष्टिकोण और विचारों के प्रसार, स्कूल और समाज में उनका रचनात्मक हस्तांतरण, पाठ्यचर्या के विभिन्न आयामों पर विवेचनात्मक चिंतन तथा बच्चों के लिए शिक्षा के अधिकार का माहौल तैयार करने में इन सभी समाज–समूहों का लगातार जुड़ाव तथा सहयोग आवश्यक है।

शिक्षक संगठन और संस्थाएँ स्कूली शिक्षा के विकास में जितनी उनसे उम्मीद की जाती रही है उससे कहीं ज्यादा बड़ी भूमिका निभा सकती हैं। उदाहरण के लिए, वे सदस्य षिक्षकों पर अपने प्रभाव का इस्तेमाल कर षिक्षण समय से समझौता न करना सुनिश्चित कर सकते हैं। इस प्रकार वे स्कूल के क्रियाकलापों में सुधार के मानक बना सकते हैं और दायित्वबोध की संस्कृति के विकास में मदद कर सकते हैं। पाठ्यचर्या को प्रभावी ढंग से पढ़ाने के लिए वे आवष्यक सुझाव भी दे सकते हैं और रचनात्मक दबाव समूह के रूप में वे स्कूली संसाधन, शिक्षक–शिक्षा की गुणवत्ता और पेशेवर सुधारों की बात कर सकते हैं। ये संस्थाएँ स्थानीय स्तर की संस्थाओं के साथ–साथ खण्ड संदर्भ केंद्र और संकुल संदर्भ केंद्र के साथ इसका जायज़ा ले सकती हैं कि कितना अकादमिक समर्थन चाहिये और उस संबंध में अपनी राय दे सकती हैं।

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रुपरेखा–2005

वैश्विक स्तर पर इस बात को महसूस किया गया कि 'सबके लिए शिक्षा' तथा प्रारम्भिक शिक्षा के सार्वभौमिक के उद्देश्यों को निश्चित समयावधि में कोई भी राज्य अकेले पूरा नहीं कर सकता अतः यह महसूस किया गया कि स्वयंसेवी संस्थाओं, गैर–सरकारी संगठनों तथा समुदायों का सहयोग आवश्यक है।

भारत सरकार ने गैर–औपचारिक शिक्षा के क्रियान्वयन हेतु स्थानीय एवं अंतर्राष्ट्रीय गैर–सरकारी व स्वैच्छिक/स्वयंसेवी संस्थाओं को साथ लेने पर जोर दिया। सरकार ने स्वैच्छिक सगंठनों को 'सबके लिए शिक्षा' के उद्देश्य को पूरा करने के लिए जीवंत साथी के तौर पर देखा्। अतः नीतिगत स्तर पर सरकार ने भी शिक्षा के सभी स्तरों पर स्वैच्छिक संगठनों को बढावा देने के प्रयास किये है। अनौपचारिक शिक्षा केन्द्रों के अलावा स्वैच्छिक संगठन प्रारंभिक शिक्षा के प्रोत्साहन के लए नवाचारी कार्यक्रमों में भी शामिल है। पिछले दो दशकों में सरकारी क्षेत्र तथा विभिन्न स्वैच्छिक संगठनों (जैसे प्रथम, अक्षय पात्र फाउडेशन, माया, एम.वी. फाउडेशन, अजीम प्रेमजी फाउडेशन एकलव्य आदि) के सहयोग कार्यक्रम एवं प्रयास सफल रहे है। इनमें से अधिकतर कार्यक्रमों का केन्द्रण सामाजिक एवं आर्थिक रूप से पिछड़े क्षेत्रों, समाज के हाशिये पर धकेले गए वर्गों तथा बालिका शिक्षा इत्यादि था। इनमें से कई संगठन कामकाजी बच्चों तथा शहरी कच्ची बस्तियों में रहने वाले बच्चों के स्वास्थ्य, पोषण तथा शिक्षा के प्रावधान में भी लगे हैं।

वर्तमान में भारत में अनेक स्वैच्छिक संस्थाएँ विभिन्न शैक्षिक कार्यों में सरकार का सहयोग कर रहे है। आगे हम कुछ संगठनों के बारे में संक्षिप्त अध्ययन करेंगे।

यूनिसेफ

संयुक्त राष्ट्र बाल कोष (United Nations International Children’s Emergency Fund) की स्थापना का आंरभिक उद्देश्य द्वितीय विश्व युद्ध में नष्ट हुए राष्ट्रों के बच्चों को खाना और स्वास्थ्य सेवाएं उपलब्ध कराना था। इसकी स्थापना संयुक्त राष्ट्र की महासभा ने 11 दिसंबर, 1946 में की थी। सन् 1953 में यूनीसेफ, संयुक्त राष्ट्र का स्थाई सदस्य बन गया। उस समय इसका नाम ‘यूनाइटेड नेशंस इंटरनेशनल चिल्ड्रेस फंड’ की जगह ‘यूनाइटेड नेशन्स चिन्ड्रेस फंड’ कर दिया गया। इसका मुख्यालय न्यूयॉर्क में है। यूनीसेफ को सन् 1965 में उसके बेहतर कार्य के लिए शांति के नोबेल पुरस्कार से सम्मानित किया गया था। सन् 1989 में संगठन को इंदिरा गांधी अन्तर्राष्ट्रीय शांति पुरस्कार भी प्रदान किया गया था।

वर्तमान में इसके 120 से अधिक शहरों में कार्यालय हैं और 190 से अधिक स्थानों पर इसके कर्मचारी कार्यरत हैं। वर्तमान में यूनीसेफ फंड एकत्रित करने के लिए विश्व स्तरीय एथलीट और टीमों की सहायता लेता है। यूनीसेफ का आपूर्ति प्रभाग कार्यालय कोपनहेगन, (डेनमार्क) में है। यह कुछ महत्वपूर्ण सामान जैसे जीवन रक्षक टीके, एचआईवी पीड़ित बच्चों व उनकी माताओं के लिए दवा, कुपोषण के उपचार केलिए दवाइयाँ, आकस्मिक आश्रय आदि के वितरण को प्राथमिकता देता है। 36 सदस्यों का कार्यकारी दल यूनीसेफ के कार्यों की देखरेख करता है। यह नीतियाँ बनाता है और साथ ही यह वित्तीय और प्रशासनिक योजनाओं से जुड़े कार्यक्रमों को स्वीकृति प्रदान करता है। वर्तमान में यूनीसेफ मुख्यतः पांच प्राथमिकताओं पर केन्द्रित है। बच्चों का विकास, बुनियादी शिक्षा, लिंग के आधार पर समानता (इसमें लड़कियों की शिक्षा शामिल है), बच्चों का हिंसा से बचाव, शोषण एवं बाल–श्रम के विरोध में, बच्चों के अधिकारों के वैधानिक संघर्ष के लिए काम करता है।

बिहार प्रांत में भी यूनीसेफ की मदद से विभिन्न सरकारी एवं गैर–सरकारी योजनाएँ शिक्षा, स्वास्थ्य एवं पोषण के क्षेत्र में ग्रामीण एवं पिछड़े क्षेत्रों में संचालित हो रही है।

यूनेस्को

संयुक्त राष्ट्र शैक्षिक, वैज्ञानिक एवं सांस्कृतिक संगठन (United Nations Educational, Scientific and Cultural OrganÁaiton) का लघुरूप है। संयुक्त राष्ट्र शैक्षिक, वैज्ञानिक तथा सांस्कृतिक संगठन (यूनेस्को) संयुक्त राष्ट्र का एक घटक निकाय है। इसका कार्य शिक्षा, प्रकृति तथा समाज विज्ञान, संस्कृति तथा संचार के माध्यम से अंतराष्ट्रीय शांति को बढ़ावा देना है। संयुक्त राष्ट्र की इस विशेष संस्था का गठन 16 नवंबर, 1945 को हुआ था। इसका उद्देश्य शिक्षा एवं संस्कृति के अंतराष्ट्रीय सहयोग से शांति एवं सुरक्षा की स्थापना करना है, ताकि संयुक्त राष्ट्र के चार्टर मौलिक स्वतंत्रता हेतु वैश्विक सहमति बन पाए। इसका मुख्यालय पैरिस (फ्रांस) में स्थित है। यूनेस्को मुख्यतः शिक्षा, प्राकृतिक विज्ञान, सामाजिक एवं मानव विज्ञान, संस्कृति एवं सूचना व संचार के जरिये अपनी गतिविधियां संचालित करता है। वह साक्षरता बढ़ानेवाले कार्यक्रमों को प्रायोजित करता है और

वैश्विक धरोहर की इमारतों और उद्यानों के संरक्षण में भी सहयोग प्रदान करता है। भारत में विभिन्न संगठनों के साथ यूनेस्कों के कार्यात्मक संबंध है। सहस्त्राब्दी विकास लक्ष्य तथा गरीबी उन्मूलन हेतु बदलते समय एवम् पर्यावरण मे यूनेस्को उच्च शिक्षा के क्षेत्र में अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर नीति निर्माण का काम करती है। यह संगठन शिक्षा तथा रोजगार की बदलती आवश्यकताओं के अनुसार उच्च शिक्षा में नवाचार तथा वंचित और कमजोर वर्गों के विद्यार्थियों की उच्च शिक्षा के क्षेत्र में भागीदारी को बढ़ावा देने का काम भी करता है। यूनेस्कों भविष्य हेतु ऐसे शिक्षक तैयार करने पर जोर देता है जो बेहतर नागरिक तैयार करेंगे, जो बच्चों के प्रति संवेदनशील होंगे तथा उनमें समझ और निर्णयन की क्षमता विकसित कर सकेंगे।

शिक्षक शिक्षा के क्षेत्र में यूनेस्कों निम्न योगदान कर रहा है–

- शिक्षकों को वैश्विक स्तर का नेतृत्व प्रदान करना।
- उनको व्यावसायिक प्रशिक्षण प्रदान करना।
- राष्ट्रीय विकास में शिक्षक की भूमिका को रेखांकित करना।
- खुली व दूरस्थ शिक्षा, ई–लर्निंग, शिक्षक शिक्षा में सूचना तकनीक का प्रयोग आदि से सम्बन्धित विभिन्न नीतियों का निर्माण एवं प्रसार
- विभिन्न देशों में विकसित एवं नवाचारी प्रक्रियाओं का आदान–प्रदान करना, उनके प्रबंधन, प्रशासन और प्रमुख नीतिगत मुद्दों पर काम करना।
- यूनेस्को/ आईएलओ को शिक्षकों की स्थिति से संबंधित सिफारिश करना तथा उसी के लिए रूपरेखा प्रदान करना

गतिविधि

- आप यूनिसेफ एवं यूनेस्कों की वेबसाईट पर जाकर उनके द्वारा किए जानेवाले कार्यों को समझे। उनमें से वैसे कार्य जो बच्चों की शिक्षा और मुख्यतः विद्यालय से सम्बंधित है, उनकी सूची बनाएं तथा अपने अध्ययन केन्द्र पर चर्चा करें।
  Website of UNICEF: **unicef.in**
  Website of UNESCO: **en.unesco.org**

- इसके साथ ही, राज्य एवं राष्ट्रीय स्तर पर भी कई गैर सरकारी संगठन कार्य कर रहे हैं जिनके विषय में आपको जानकारी होनी चाहिए। उनमें से कुछ के नाम एवं वेबसाइट विवरण इस प्रकार से हैं। आप उनके कार्यों के बारे में कुछ बातों को जाने जो आपके अपने विद्यालय के लिए मददगार होंगी।
  Tess-India: **www.tess-india.edu.in**
  Save the Children: **www.savethechildren.in**
  Deshkal Society: **www.deshkalindia.com**
  Azim Premji Foundation: **www.azimpremjifoundation.org**
  Pratham: **www.pratham.org**

बिहार में शिक्षा की स्थिति पर भी इन संस्थाओं द्वारा कई कार्य किए जा रहे हैं, उनके विषय में जाने।

4.5 शिक्षक प्रशिक्षण केन्द्र

शिक्षकों को विद्यालय के लिए तैयार करने में शिक्षण प्रशिक्षण संस्थानों की विशेष भूमिका होती है। साथ ही कई ऐसे केन्द्र भी होते हैं जहां पर शिक्षकों को अपने सेवाकाल के दौरान सतत प्रशिक्षण का अवसर मिलता है। उन्हीं में से कुछ संस्थानों की चर्चा यहां की जा रही है जो आपके संदर्भ में विशेष महत्व के हैं।

4.5.1 जिला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान (डायट) एवं प्राथमिक शिक्षक शिक्षा महाविद्यालय (PTEC)

देश में शिक्षक शिक्षा एवं प्रशिक्षण व्यवस्था में आमूलचूल परिवर्तन लाने हेतु राष्ट्रीय शिक्षा नीति–1986 के पश्चात निर्मित कार्ययोजना (1992), में देश के प्रत्येक जिले में जिला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान (District Institute of Educational Training) खोले जाने की परिकल्पना की गई। इसमें शिक्षक शिक्षा संस्थानों की अकादमिक, प्रशासनिक तथा वित्तीय संदर्भ में कार्यात्मक स्वायत्तता की भी परिकल्पना की गई थी। यह अपेक्षा की गई थी कि ये संस्थान देशभर में विभिन्न जिलों में कार्यरत शिक्षकों को बेहतर गुणात्मक अकादमिक सहयोग प्रदान करेंगे, पूर्व निर्धारित उद्देश्यों एवं नियमों के प्रति उत्तरदायी होंगे। सन् 1987 में यह योजना पूर्णतः 'केन्द्रीय स्तर की योजना (Central Sector Scheme) के रूप में अभिकल्पित की गई थी। जिसके तहत सन् 1989 तक देशभर में 216 जिला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान खोले गए।

प्राथमिक शिक्षक शिक्षा महाविद्यालय : स्वतंत्रता के पूर्व भी प्राथमिक विद्यालयों में शिक्षण हेतु शिक्षकों को पृथक प्रशिक्षण दिया जाता रहा है। उच्च प्राथमिक (मिडिल) कक्षा उत्तीर्ण व्यक्तियों को इन पाठ्यक्रमों में प्रवेश मिलता था। इन संस्थाओं में प्रशिक्षण की अवधि दो वर्ष थी। स्वतंत्रता प्राप्ति (सन् 1947) तक भारत में 51 पी.टी.ई.सी. और 528 नार्मल स्कूल थे। इनमें 339 नार्मल स्कूल पुरूषों के लिए और 189 नार्मल स्कूल महिलाओं के लिए थे। राज्य में अध्यापक शिक्षा को बल प्रदान करने के उद्देश्य से शोध एवं प्रशिक्षण निदेशालय को सुदृढ़ किया गया है। इसके अन्तर्गत राज्य के प्रत्येक जिला में एक जिला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान, कम से कम प्रत्येक तीन जिला पर एक अध्यापक शिक्षा महाविद्यालय तथा राज्य के अनुसूचित जाति तथा अल्पसंख्यक बाहुल्य प्रत्येक जिला में एक प्रखण्ड अध्यापक शिक्षा संस्थान स्थापित करने का प्रावधान किया गया है। वर्तमान में राज्य में 38 जिला हैं जिसमें मात्र 24 जिला में ही डायट्स स्वीकृत है। आगामी वर्षों में शेष 14 जिलों में नये डायट्स स्थापित करने का लक्ष्य है। 14 नये डायट्स में से 9 जिलों में डायट्स की स्थापना इन जिलों में संचालित प्राथमिक शिक्षण शिक्षा महाविद्यालयों के उत्कृमण से की जाएगी। कुछ जिलों (दरभंगा, पूर्वी चम्पारण, कटिहार एवं पश्चिमी चम्पारण) में संचालित प्राथमिक शिक्षक शिक्षा महाविद्यालयों (Primary Teacher Education College) को क्रमोन्नत पर प्रखण्ड अध्यापक शिक्षा संस्थान के रूप में स्थापित किए जाने की योजना है।

संस्थान का मिशन एवं भूमिकाः

डायट्स का प्रमुख ध्येय, निम्न उद्देश्यों के सन्दर्भ में आरंभिक शिक्षा व वयस्क शिक्षा के क्षेत्र में जमीनी स्तर पर विभिन्न कार्यक्रमों एवं प्रयासों की सफलता हेतु अकादमिक एवं संसाधनों के स्तर पर सहायता प्रदान करना है।

- प्रारंभिक शिक्षा का विश्वव्यापीकरण
- वयस्क शिक्षा – राष्ट्रीय साक्षरता मिशन के उद्देश्यों के संदर्भ में 15–30 वर्ष आयु वर्ग में कार्यात्मक साक्षरता।

उपरोक्त मिशन वाक्य सामान्य प्रकृति है। जिसमें विभिन्न राज्यों एवं जिलों की आवश्यकता विशेष को ध्यान में रखते हुए संदर्भगत परिवर्तन किया जा सकता है।

जि. शि. प्र. संस्थानों से आपेक्षित है कि वे राज्य के अन्य संस्थानों जैसे ब्लॉक संसाधन केन्द्रों (BRC's), संकुल संसाधन केन्द्रों (CRC's) व विद्यालयों के साथ संगति बिठाते हुए व्यापक स्तर पर शिक्षकों के विकास कार्य, पाठ्यचर्या एवं शिक्षण–अधिगम सामग्री विकसित करे। जहाँ तक पाठ्यचर्या को संचालित करने का प्रश्न है तो यह आपेक्षित है कि ये संस्थान ऐसे शिक्षण कार्यक्रम बनाएंगे जोकि प्रतिभागियों की आवश्यकताओं के अनुरूप एवं बाल–केन्द्रित उपागम पर आधारित होंगे। प्रतिभागियों में परीक्षण करने, खोजने, सीखने, अभ्यास, सुधार एवं नवाचार करने तथा, अपने स्थानीय वातावरण का शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया में उपयोग करने की सक्षमता विकसित की जाएगी।

> विश्वविद्यालयों, एससीईआरटी और डाइट जैसी संस्थाओं को आपस में जोड़ने की आवश्यकता है इससे शिक्षक–शिक्षा के अकादमिक कार्यक्रम, सेवाकालीन प्रशिक्षण तथा अपने अंदर ही शोध की क्षमता विकसित करने का अवसर मिलेगा। इस संदर्भ में, यह उचित होगा कि ऐसे स्कूल/शैक्षिक परिसर बनाने के विचार पर चर्चा की जाए जो किसी एक भौगोलिक क्षेत्र के विश्वविद्यालयों, कॉलेजों, स्कूलों, एससीईआरटी/डाइट तथा गैर–सरकारी संगठनों को निकट ला सकें ताकि कार्यक्रमों के अकादमिक सहयोग तथा प्रबोधन, निरीक्षण और मूल्यांकन का तंत्र विकसित किया जा सके।
>
> *राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रुपरेखा–2005*

इन संस्थानों के मुख्य कार्य निम्नलिखित हैं–

- स्थानीय स्तर पर प्राथमिक शिक्षा की जरूरतों एवं समस्याओं का सर्वेक्षण करना।
- प्राथमिक शिक्षकों हेतु सेवापूर्ण तथा सेवाकालीन शिक्षक शिक्षा कार्यक्रमों का संचालन करना। इसके अन्तर्गत विद्यालयी शिक्षक, मुख्याध्यापक, ब्लॉक एवं संकुल स्तर के शिक्षा अधिकारियों के प्रशिक्षण कार्यक्रमों को शामिल किया जाता है।
- अनौपचारिक शिक्षा एवं वयस्क शिक्षा से जुड़े व्यक्तियों हेतु प्रशिक्षण कार्यक्रमों का संचालन करना।
- ग्राम शिक्षा समिति के सदस्यों तथा उन इच्छुक नौजवानों / स्वयं सेवकों को प्रशिक्षण देना जो शिक्षा में सेवा देना चाहते है।
- शिक्षकों की उनके 'विषयों' एवं शिक्षण पद्धतियों में सुधार लाने हेतु प्रयास करना।
- कार्यात्मक अनुसंधान संचालित करने तथा शिक्षकों को कार्यात्मक अनुसंधान करने हेतु तैयार करने संबंधी प्रशिक्षण देने का कार्य भी जिला शिक्षा एवं प्रशिक्षण सस्थानों का है।
- विद्यालयों में शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार लाना।

अधिकतर राज्यों में ये संस्थान पहले से उपस्थित शिक्षक प्रशिक्षण संस्थानों (Teacher Training Institutes) को क्रमोन्नत करके खोले गये हैं। इन संस्थानों से संबंधित निम्न मुद्दे विचारणीय है :–

- देशभर में डायट्स का असमान विकास (यह असमान विकास अन्तर्राजीय (राज्यों के स्तर पर) भी है तथा अन्तःराजीय (एक ही राज्य में विभिन्न जिलों के संदर्भ में) भी है।)

- अभी भी कुछ राज्यों में डायट्स, ब्लॉक एवं संकुल संसाधन केंद्रों को सांविधिक दर्जा नहीं दिया गया है। इसके चलते यह शिक्षकों पर नवाचारी विद्यार्थी मूल्यांकन एवं अधिगम परिणामों के संदर्भ में जवाबदेही निर्धारित करने में प्रभावी नहीं रह पाते।
- अनेक राज्यों में प्रशिक्षित शिक्षक प्रशिक्षकों की कमी के चलते इन संस्थानों में 'शिक्षा सेवा अधिकारियों' को ही भर्ती कर लिया गया है।
- अधिकतर संस्थानों में स्टाफ की कमी तथा अन्य प्रशासनिक बाधाओं (जैसे राज्यों द्वारा इन संस्थानों को प्राथमिकता न देना, भर्ती प्रक्रिया की कठोरता, संकुल/ब्लॉक एवं राज्य स्तर के अन्य संस्थानों के साथ समुचित समन्वयन न होना इत्यादि) के चलते ये संस्थान अधिक कुशलतापूर्वक कार्य नहीं कर पाते हैं।
- केवल कुछ ही राज्यों में अनुसंधान एवं प्रशिक्षण हेतु भिन्न संवर्ग (कैडर) बनाए गए हैं अतः स्कूली शिक्षा अनुसंधानों के संदर्भ में इन संस्थानों का योगदान बहुत ही कम हैं।
- विभिन्न मूल्यांकन अध्ययनों से इन संस्थानों के बारे में निम्न बात उभर कर आयी है।
    - जिन उद्देश्यों को लेकर ये संस्थान खोले गए थे, वे पूरे नहीं हुए है।
    - अनेक राज्य इसे 'केन्द्रीय सरकार की योजना' मानते हैं अतः उन्हे इसके स्वामित्व का अहसास ही नहीं है अतः वे इस पर ध्यान भी नहीं देते।
    - अभी भी अधिकतर संस्थानों में भारी मात्रा में रिक्तियाँ नहीं भरी गई हैं।
    - ये संस्थान शैक्षिक उत्कृष्टता के केन्द्र के रूप में स्थापित नहीं हो पाए है।
    - यह संस्थान अन्य शिक्षक शिक्षा संगठनों एवं संस्थानों के साथ भी बेहतर संबंध स्थापित नहीं कर पाए है।

गतिविधि

- अपने जिले के जिला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान (डायट) के बारे में सूचनाओं को एकत्र करके उसको एक चार्ट पर प्रदर्शित करें।
- यदि आपके जिले में प्राथमिक शिक्षक शिक्षा महाविद्यालय है तो उसके विषय में भी सूचनाओं को एकत्र करके चार्ट बनाएं।

4.5.2 जिला संसाधन केन्द्र (DRC), प्रखण्ड संसाधन केन्द्र (BRC) एवं संकुल संसाधन केन्द्र (CRC)

जिला संसाधन केन्द्र (DRC) एवं प्रखण्ड संसाधन केंद्र (Block Resource Centre) को प्राथमिक शिक्षकों व अन्य प्रशिक्षकों के प्रशिक्षण एवं अन्य वृतिक विकास के प्रबन्धन हेतु स्थापित किया गया था। जिला संसाधन केन्द्र (DRC) के माध्यम से पूरे जिले के विद्यालयों को कई प्रकार के संसाधनों को उपलब्ध कराया जाता है। प्रत्येक शिक्षायी ब्लॉक स्तर पर शिक्षा संसाधकों का समूह स्थापित करने का कार्य किया। चूंकि ये सक्रिय प्रतिभागी होते है, अतः डायट्स के निर्देशों के अनुसार मुख्य अध्यापकों, शिक्षकों, संकुल समन्वयकों, विद्यालय प्रबंधन समिति के सदस्यों तथा गैर–सरकारी संगठनों के साथ विभिन्न प्रकार के प्रशिक्षण कार्यक्रमों का आयोजन भी करवाते हैं। कई ब्लॉक संसाधन केन्द्र, डायट तथा शिक्षकों के बीच समन्वय एवं सेतु का काम भी करते हैं।

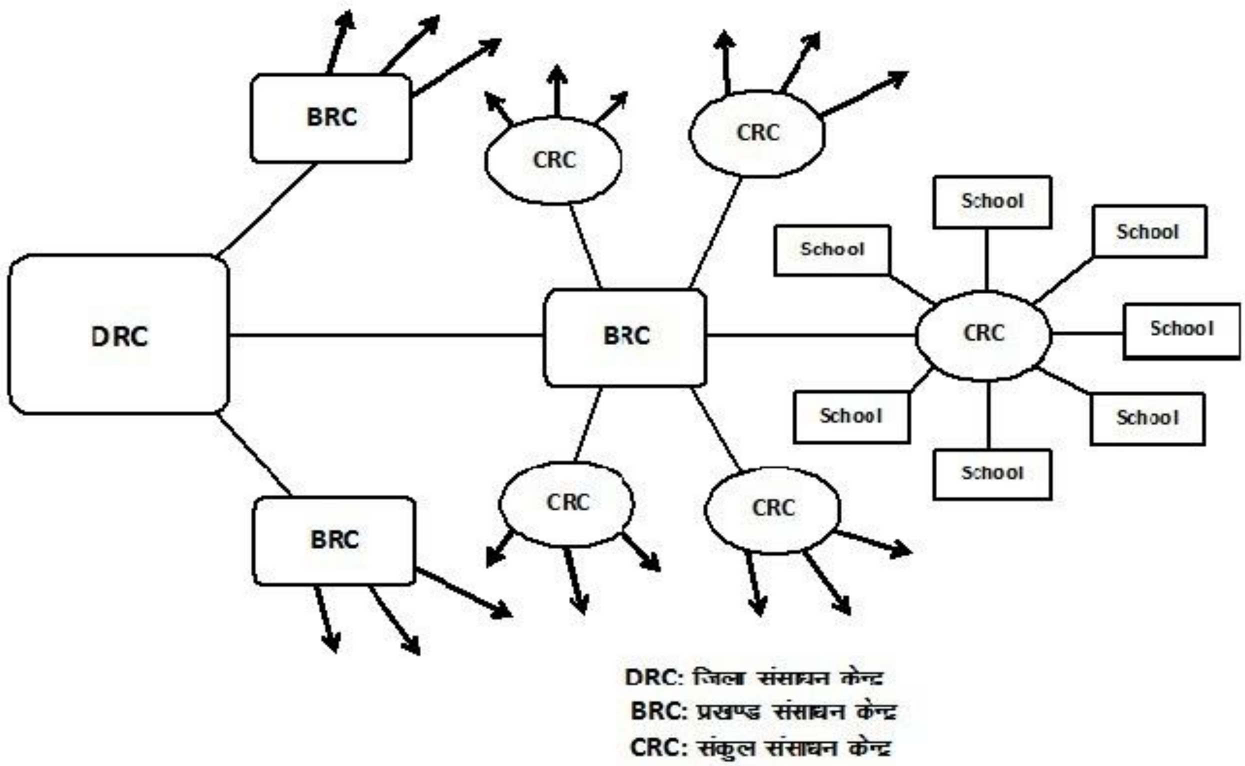

संकुल संसाधन केन्द्रों (Cluster Resource Centre) को संकुल विशेष के अन्तर्गत आने वाले विद्यालयों के शिक्षकों को प्रत्यक्ष अकादमिक संसाधन सहायता प्रदान करने के लिए स्थापित किया गया था। सामान्यतः प्रत्येक संकुल में 10–15 विद्यालय तथा 40–50 शिक्षक होते है। संकुल संसाधन केन्द्र इस बारे में भी सूचना उपलब्ध करवाते हैं कि किस हद तक विभागीय कार्यक्रमों को विद्यालयों में लागू किया गया है तथा इन कार्यक्रमों को लागू करने एवं विस्तारित करने में कौन–कौन सी बुनियादी एवं व्यावहारिक समस्याएँ आयी।

लगभग सभी राज्यों में प्रखण्ड (ब्लॉक) संसाधन केन्द्रों का निर्धारण राजस्व ब्लॉक के आधार पर किया गया है न कि शिक्षायी ब्लॉक के आधार पर। अतः देश में अधिकतर ब्लॉक संसाधन केन्द्रों पर अधिक कार्य भार है। इन केन्द्रों पर विद्यालय संबंधी सूचना एकत्रण एवं अन्य प्रबंधन संबंधी अतिरिक्त कार्य भार भी डाल दिया गया। इसका विपरीत असर इन केन्द्रों द्वारा प्रदान किए जा रहे शिक्षक प्रशिक्षण हेतु सहायता, एवं शैक्षिक–अकादमिक संरचना की कार्यकुशलता पर पड़ रहा है।

वर्तमान में शिक्षा का अधिकार अधिनियम–2009 लागू होने से भी इन संस्थानों का महत्त्व बढ़ गया है, क्योंकि शिक्षा का अधिकार 'गुणवत्ता शिक्षा' के प्रावधान को सुनिश्चित करता है, जिसमें सभी बच्चों को अपनी–अपनी क्षमताओं के अनुसार उपलब्धि स्तर प्राप्त हो सके। मौजूदा असमान शिक्षा प्रणाली में यह आवश्यक है कि ब्लाक संसाधन केन्द्र तथा संकुल/क्लस्टर संसाधन केन्द्र विद्यालयों में गुणवत्ता सुधार की प्रक्रियाओं में अधिक सक्रिय एवं सकारात्मक भूमिका निभायें ताकि शिक्षा का मौलिक अधिकर सही मायनें में व्यवहार्य हो सके।

प्रखंड संसाधन केंद्र और संकुल संसाधन केंद्र स्कूलों एवं शिक्षकों की सहायता के लिए हर ज़िले में कार्यरत हैं। प्रशिक्षण देने के लिए ज़िला शिक्षा और प्रशिक्षण संस्थान प्रत्येक ज़िले में बनाए गए हैं। परस्पर व्याप्त गतिविधियों और स्पष्टता के अभाव में इन संस्थाओं का कामकाज प्रभावित होता है। बहुधा, इन संसाधन केंद्रों के अधिकारी केवल प्रशासनिक और आंकड़े इकट्ठे करने के काम के लिए रह जाते हैं। स्कूल स्तर की अकादमिक योजना के विकेंद्रीकरण और पाठ्यचर्या प्रसार में बच्चों की ज़रूरतों तथा शिक्षकों के सक्रिय और रचनात्मक सहयोग को ध्यान में रखते हुए यह आवश्यक है कि खण्ड संसाधन केंद्रों और संकुल संसाधन केंद्रों को सक्रिय किया जाए ताकि वे महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकें। यह भी आवश्यक है कि इन केंद्रों में संदर्भ व्यक्तियों की भूमिका तय की जाए। विषय संबंधी जानकारी और प्रशिक्षण के आधार पर उनकी क्षमता का विकास किया जाए

और काम करने के लिए उन्हें स्वायत्तता दी जाए, ताकि वे कि कहीं और परिकल्पित कार्यशालाओं का आयोजन ही न करते रहें। ये केंद्र अपनी स्थानीय ज़रूरतों के मुताबिक परिकल्पित कार्यशालाओं का आयोजन तथा बाद में अनुसरण कार्यक्रम कर सकते हैं। स्कूल दौरे के नियम, व्यवस्थित निरीक्षण के कायदे, अकादमिक मदद आदि के तरीके ईजाद किए जाने की ज़रूरत है। एक ऐसे ढाँचे की भी आवश्यकता है जो संसाधन केंद्र द्वारा विकसित कार्यों का समन्वय करे।

शिक्षकों के लिए स्कूल–आधारित अकादमिक सहायता को मजबूत बनाए जाने के क्रम में यह आवश्यक है कि गाँव, समुदाय और खंड स्तर पर, उसी तरह शहरी इलाकों में भी ऐसे संदर्भ व्यक्तियों की सूची बनाई जाए जिनसे समय–समय पर शिक्षक आवश्यकतानुसार सुझाव ले सकें। यह संभव हो सकता है कि इस प्रकार की सहायता ब्लॉक/संकुल स्तर पर तैयार की जाए और उन्हें फिर नियमित शिक्षक सहायता कार्यक्रम से जोड़कर इसके लिए धन उपलब्ध कराया जाए।

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रुपरेखा–2005

गतिविधि

- आप अपने प्रखण्ड संसाधन केन्द्र तथा संकुल संसाधन केन्द्र की स्थिति का अध्ययन करें तथा कुछ ऐसे उपयों को सुझाएं जिससे उन्हें आपके लिए कारगर बनाया जा सके।
- आपके प्रखण्ड एवं संकुल संसाधन केन्द्र के कार्यों का विद्यालयों पर क्या प्रभाव पड़ रहा है इसके विषय में कुछ लोगों से बातचीत करें और अपने अध्ययन केन्द्र पर साझा करें।

4.6 शैक्षिक योजनायें

विद्यालयों में कई प्रकार की शैक्षिक योजनाएं सदैव चलती रहती हैं जिसका विद्यालय पर गहरा प्रभाव पड़ता है और शिक्षकों की भागीदारी भी उनके संचालन में होती है। इस खण्ड में वैसे ही कुछ शैक्षिक योजनाओं का परिचयात्मक विवरण आगे दिया जा रहा है।

4.6.1 सर्व शिक्षा अभियान (SSA)

सर्व शिक्षा अभियान भारत सरकार का एक ऐसा कार्यक्रम है। जो आरम्भिक शिक्षा के सार्वजनीकरण (UEE) पर समयबद्ध तरीके से बल देता है। यह प्रतिबद्धता संविधान के 86वें संशोधन से और अधिक बढ़ गई है। यह संशोधन 6–14 वर्ष तक के सभी बच्चों को मुफ्त और अनिवार्य शिक्षा का अधिकार देता है।

सर्व शिक्षा अभियान राज्यों के सहयोग से चलने वाला शिक्षा में गुणवत्तापूर्ण सार्वजनीकरण का एक महत्वाकांक्षी कार्यक्रम है। जिसके अन्तर्गत विद्यालय के शैक्षिक वातवरण को सुखद एवं सुविधायुक्त बनाना भी है। बिहार भी एक ऐसा ही राज्य है जिसमें यह कार्यक्रम बहुत ही महत्वकांक्षी तरीके से चल रहा है। इसी योजना के तहत, विद्यालय की आधारभूत संरचना को मजबूत करने के साथ–साथ बिहार में शिक्षकों को नियोजन करने का अभियान भी चल रहा है।

गतिविधि

- इस कार्यक्रम के अंतर्गत, आपके विद्यालय में क्या–क्या होता है उसकी सूची बनाएं तथा अपने अध्ययन केन्द्र पर साझा करें।
- आप सर्व शिक्षा अभियान के कार्यों का अपने राज्य की शिक्षा पर क्या प्रभाव देखते हैं, इस विषय में अध्ययन केन्द्र पर परिचर्चा का आयोजन करें।

4.6.2 राष्ट्रीय माध्यमिक शिक्षा अभियान (RMSA)

इस योजना को मार्च 2009 में लागू किया गया है जिसका मुख्य लक्ष्य माध्यमिक स्तर की शिक्षा तक बच्चों की पहुंच को बढ़ाना तथा इसके गुणवता में सुधार करना। इसके अंतर्गत यह प्रावधान किया जा रहा है कि हर बच्चे के उचित पहुंच के अंदर एक माध्यमिक स्तर का विद्यालय अवश्य हो। साथ ही उस विद्यालय में शिक्षा सम्बंधी विभिन्न संसाधनों की उपलब्धता पर भी इस कार्यक्रम के माध्यम से काम किया जा रहा है ताकि विद्यालय में अपेक्षित कक्षाकक्षों की संख्या, प्रयोगशालाएं, पुस्तकालय, कला कक्षा, शौचालय, जल की व्यवस्था, छात्रावास आदि का प्रबंध किया जा सके।

गतिविधि

- इस कार्यक्रम के अंतर्गत, विद्यालय में क्या–क्या होता है उसकी सूची बनाएं तथा अपने अध्ययन केन्द्र पर साझा करें।
- आप राष्ट्रीय माध्यमिक शिक्षा अभियान के कार्यों का अपने राज्य की शिक्षा पर क्या प्रभाव देखते हैं, इस विषय में अध्ययन केन्द्र पर परिचर्चा का आयोजन करें।
- सर्व शिक्षा अभियान और राष्ट्रीय माध्यमिक शिक्षा अभियान के जैसे ही समेकित बाल विकास योजना (ICDS) भी एक महत्वपूर्ण योजना है। यह योजना किस विभाग द्वारा चालायी जाती है तथा विद्यालय में इसका क्या स्वरूप दिखता है, इसके बारे में पता लगाएं।

4.6.3 बिहार शिक्षा परियोजना (BEP)

इस परियोजना की शुरूआत सन् 1991 में बिहार में प्रांरभिक शिक्षा में गुणात्मक एवं मात्रात्मक सुधार लाने हेतु की गई थी। बिहार शिक्षा परियोजना (Bihar Education Project) राज्य में बालिकाओं, अल्पसंख्यक समुदायों, समाज के वंचित व दलित एवं पिछड़ें वर्गों की सार्वभौमिक शिक्षा पर जोर देती है।

बिहार शिक्षा परियोजना परिषद के उद्देश्य निम्न है–

- प्रारंभिक शिक्षा के सार्वभौमीकरण को संयुक्त रूप से सार्वजनिक पहुँच, सार्वजनिक नामांकन, सार्वजनिक ठहराव एवं सार्वजनिक उपलब्धि हेतु कार्यक्रम के तौर पर कार्य करना।
- निरक्षरता में भारी कमी लाना।
- शिक्षा व्यवस्था में संशोधन लाना ताकि महिलाओं की समानता और उनके सशक्तिकरण के उद्देश्य को पूरा किया जा सके।
- शैक्षिक प्रयासों में 'समता' एवं 'सामाजिक न्याय' पैदा करना।
- शिक्षा को लोगों के कार्य एवं रहन–सहन के वातावरण के साथ जोड़ना
- विज्ञान एवं पर्यावरण संबंधी शैक्षिक गतिविधियों पर विशेष ज़ोर देना।
- शिक्षा की भागीदारी में विद्यार्थी एवं बालिकाओं के बीच अंतराल को कम करना।

बिहार में यह शिक्षा परियोजना अपने निरंतर प्रयास से ग्रामीण और अर्द्ध शहरी क्षेत्रों में शिक्षा के प्रचार–प्रसार के लिए विशेषतः बालिकाओं, विशेष आवश्यकताओं वाले बच्चों और समाज के वंचित एवं दलित समुदायों के लिए निम्न कार्यक्रम संचालित करती हैः–

- सर्व शिक्षा अभियान
- प्राथमिक स्तर पर बालिकाओं की शिक्षा के लिए राष्ट्रीय कार्यक्रम
- कस्तूरबा गाँधी बालिका विद्यालय
- जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम
- विद्यालय स्वच्छता और स्वास्थ्य शिक्षा
- हुनरः मुस्लिम बालिका सशक्तीकरण कार्यक्रम

4.7 समेकन

इस प्रकार हम पाते हैं कि विभिन्न संस्थायें अपने अपने कार्यों के माध्यम से शैक्षिक प्रशासन में भूमिका निभाते हैं। जहां विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के द्वारा उच्च शिक्षा के विकास पर ध्यान दिया जाता है, वहीं राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद् द्वारा विद्यालयी शिक्षा एवं अध्यापक शिक्षा पर विशेष बल दिया जाता है। आपने राष्ट्रीय शैक्षिक योजना एवं प्रशासन विश्वविद्यालय के विषय में भी पढ़ा जो जो शैक्षिक योजना एवं प्रबंधन के क्षेत्र में क्षमता विकास और शोध कार्य में संलग्न है। देश में शिक्षकों का प्रशिक्षण समुचित ढंग से हो सके इसकी जिम्मेदारी राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद को दी गयी है। राज्य शिक्षा शोध एवं प्रशिक्षण परिषद् भी राज्यों में विद्यालयी शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार लाने में अहम भूमिका निभाते हैं। साथ ही, जिला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान (डायट) भी शैक्षिक प्रशासन व प्रबंधन में कई रूपों मे जुड़े हुये हैं। शिक्षकों के प्रशिक्षण में ब्लॉक संसाधन केन्द्रों (BRC's), तथा संकुल संसाधन केन्द्रों (CRC's) की भूमिका को प्रोत्साहित किया जा रहा है।

4.8 मूल्यांकन के लिए प्रश्न

1. इस इकाई में चर्चित विभिन्न संस्थाओं के कार्यों का तुलनात्मक विश्लेषण करें।
2. विभिन्न संस्थाओं द्वारा किये जानेवाले कार्यों का आलोचनात्मक विश्लेषण करें।
3. राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद (NCERT), नई दिल्ली उन कार्यों का उल्लेख करें जो विद्यालय से जुड़े हुए हैं।
4. राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद (NCTE), नई दिल्ली के प्रमुख कार्य क्या है? यह शिक्षकों को किस प्रकार से प्रभावित करता है।
5. जिला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान (DIET) एवं प्राथमिक शिक्षक शिक्षा महाविद्यालय (PTEC) के माध्यम से किन–किन प्रशिक्षण कार्यक्रमों को चलाया जाता है।
6. संकुल संसाधन केन्द्र का अपने वृतिक विकास के संदर्भ में मूल्यांकन करें।
7. विद्यालय से सम्बंधित कुछ योजनाओं का नाम बताएं तथा उनके प्रमुख लक्ष्यों की चर्चा करें।